829

नन्द साहित्य माला—पुष्प ७६ वां

श्रीजानकीनवमी व्रतकथा

पूजापद्धति (सहित)

प्रेमामृत वर्षिणी भाषाटीका समलङ्कृत

टीकाकार

अवधकिशोरदास श्रीवैष्णव

(प्रेमनिधि)

श्रीरामानन्द साहित्यमाला-पुष्प ७६ वाँ

❀ श्रीजनकनन्दिन्यै नमः ❀

॥ श्रीमते रामानन्दाचार्याय नमः ॥

श्रीजानकीनवमी व्रतकथा

पूजापद्धति [सहित]

श्री भुवनेश्वर संहिता तथा भविष्योत्तर
खण्ड से संकलित

प्रेमामृत वर्षिणी भाषाटीका समलङ्कृत

टीकाकार

अवधकिशोरदास श्रीवैष्णव

(प्रेमनिधि)

प्रकाशक—
श्री रामानन्दाश्रम
जनकपुर धाम (नेपाल)

महर्षि वाल्मीकि शोध संस्थान
अयोध्या
427
श्री ... मन्दिर छावनी सेवा ...

प्रथम संस्करण — १०००
निछावर — २ रुपये मात्र

मुद्रक—
श्याम मुद्रणालय
श्याम सदन, कटरा,
अयोध्या (उ०प्र०)

सन्तों की सेवा में

असीम करुणापूर्ण वात्सल्यैक महोदधिः ।
कान्ता श्रीराघवेन्द्रस्य सर्वदापातु जानकी ॥

श्रीजानकीनवमी व्रतकथा प्राप्त करने के लिए श्रीमिथिला निवासी तथा श्रीसीतारामोपासक सन्त अत्यन्त लालायित रहते थे। पञ्चाङ्गकर्ता विद्वानों के समक्ष भी श्रीजानकीनवमी एक समस्या ही बनी रहती थी। कितने लोगों को तो यह भी ज्ञात नहीं है कि श्रीजानकीनवमी कब होती है इस महान् अभाव की पूर्ति के लिए करुणामयी श्रीकिशोरीजी ने कृपा की श्रीजानकीघाट अयोध्या के श्रीरामबल्लभाकुञ्ज पुस्तकालय से अनायास इस पुस्तक को प्राप्त कराया। तदुपरांत श्रीहनुमत् निवास अयोध्याजी के कथावाचक विद्वान् सन्त श्रीरामस्वरूपदासजी महाराज के द्वारा श्रीभुवनेश्वर संहिता का श्रीजानकीनवमी माहात्म्य पुस्तक भी उपलब्ध हुआ। श्रीजानकी पूजन-पद्धति नाम से प्रकाशित दर-भंगा के विद्वानों द्वारा संगृहीत पुस्तक भी उपलब्ध हुआ। इन सब ग्रन्थों के संकलन का स्वारस्य श्रीजानकीनवमी व्रतकथा के नाम से प्रकाशित इस ग्रन्थ में संकलन किया गया है।

आशा है विद्वान् महापुरुषों को तथा श्रीजानकीजी के भक्त-जनों को यह पुस्तक अत्यन्त प्रिय लगेगा तथा इसका विपुल

प्रचार-प्रसार करने में सन्तसज्जनों का उत्साह भी बढ़ेगा एवं श्रीजानकीनवमी के विषय में होने वाली सभी शंकाओं का साङ्गो-पाङ्ग अपनोदन इस ग्रन्थ के पूर्ण रूप से पढने से स्वयं हो जायेगा।

संस्कृत भाषानभिज्ञ प्रेमी सज्जनों के लिए राष्ट्रभाषा हिन्दी में इसको श्रीप्रेमामृत वर्षिणी टीका भी कर दी गयी है।

इस पुस्तक का प्रकाशन तपस्वी **श्रीरामरतनदासजी** महाराज संकीर्तनाचार्य ने अपनी श्रद्धाभक्ति से सप्रेम किया है। आप श्रीजानकीजी के बडे प्रेमी हैं। अतः श्रीजनकपुरधाम की यात्रा भी बारंबार अत्यन्त प्रेम से करते रहते हैं। श्रीकिशोरी जी की कृपा से। इसीलिये यह **श्रीजानकीनवमी व्रतकथा** इनके पवित्र द्रव्य से प्रकाशित हो रही है। स्मरण रहे **"प्रेम रस माधुरी"** आपने ही छपवाई है, उससे बचा हुआ द्रव्य इसमें लगाया गया है।

इसके पहले उपदेश मंदाकिनी ग्रथ के प्रकाशन में तथा प्रेमरस माधुरी के प्रकाशन में भी आपका उदार आर्थिक सहयोग चिर-स्मरणीय है। श्रीकिशोरीजी से प्रार्थना है कि आपके हस्त-कमल से ऐसे ही पुण्यकार्यों को उत्तरोत्तर कराती रहें।

श्री सरयू जयन्ती
ज्येष्ठ पूर्णिमा
२०३७ वैक्रमाब्द

निवेदक—
श्री रामजीदास (सखाजी)
श्रीसीतारामीय सेवा मन्दिरम्
नजरबाग अयोध्या, (उ०प्र०)

तपस्वी श्रीरामरतनदासजी महाराज "संकीर्तनाचार्य"

श्रीजानकीनवमी-व्रतकथा

—❀०❀—

अथ वैशाखशुक्लानवमी श्रीजानकीनवमी-तदुक्तं भविष्ये

मार्कण्डेय-उवाच--

सर्वर्तु निकरश्रेष्ठे ऋतौ तु कुसुमाकरे ।
मासि पुण्यतमे विप्र! माधवे माधवप्रिये ॥१॥
नवम्यां शुक्लपक्षे तु वासरे मङ्गले शुभे ।
सार्प्ये ऋक्षे च मध्याह्ने जानकी जनकालये ॥२॥
आविर्भूता स्वयं देवी योगेषु गतिरुत्तमा ।
एतद्योगे कृतं चैतद्व्रतं प्रोक्तमनन्तकम् ॥३॥
अष्टम्यां यदि विद्धास्यान्नवमी माधवे सिते ।
कुर्य्यान्नेदं व्रतं तस्यां कृतश्चेन्न्यूनता भवेत् ॥४॥
मध्याह्न व्यापिनी ग्राह्या व्रतेऽस्मिन्नवमी तिथिः ।
दिनद्वयगतायान्तु तस्यां कार्या परा नरैः ॥५॥
एतैर्योगैर्विनापि स्यादुद्दिनं पापप्रणाशनम् ।
व्रतानां नित्यमाम्नातं कर्तव्यं व्रतमुत्तमम् ॥६॥

यस्तु नो कुरुते मोहाज्जानकीजन्म सम्भवम् ।
व्रतं स पच्यते घोरे नरके नात्र संशयः ॥७॥

सब ऋतुओं में श्रेष्ठ वसन्त ऋतु के परमपवित्र श्रीमाधव प्रभु को प्रिय माधव (वैशाख) मास में शुक्लपक्ष की नवमी तिथि पुष्यनक्षत्र-मङ्गलवार को मध्याह्नकाल में शुभ माङ्गलिक वेला में हे विप्र ! श्री जनकजी के महल में श्री जानकीजी प्रकट हुई हैं। यह स्वयं श्रीदेवी सभी की उत्तम गति हैं । इस योग में किया गया व्रत अनन्त पुण्यफल देनेवाला होता है। परन्तु यदि नवमी अष्टमी से विद्धा हो तो उस दिन व्रत नहीं करना चाहिये। करने से पुण्य घट जाता है। यदि संयोग से मध्याह्नकाल में वेधरहित शुद्ध नवमी प्राप्त हो जाय तो उसी दिन व्रत करना चाहिये तथा नवमी दो हो तो मध्याह्न व्यापिनी का विचार न कर दूसरी नवमी को ही व्रत करना चाहिये । इन सभी योगों के विना केवल शुद्ध नवमी हो तो भी उस दिन व्रत करे। तो वह भी सभी पापों का विनाश कर देता है । क्योंकि व्रत तो नित्य कर्तव्यकर्म हैं। जो मोहवश श्रीजानकी जन्मनवमी का व्रत नहीं करता है वह घोर नरक में जाता है इसमें कुछ भी संशय नहीं है (श्लोक १ से ७ पर्यन्त) ।

अत्र विशेष नियम :

अष्टम्यां प्रातरुत्थाय कृत्वाशौचमतन्द्रितः ।

महानद्यां तडागे वा कूपे वाप्यादिकेऽपि वा ॥८॥
स्नात्वा कुर्यान्नित्यकर्म प्रातः सन्ध्यादिवन्दनम् ।
देवान् पितॄँश्च सन्तर्प्य हविष्याशी च संयतः ॥६॥
एकभुग् ब्रह्मचारी च भूमिशायी च गौतम !
नवम्यां प्रातरुत्थाय दान्तो भूत्वा समाहितः ॥१०॥
तीर्थादौ विधिवत्स्नात्वा कृतनित्यक्रियो नरः ।
कुर्वीतमण्डपं रम्यं षोडशस्तम्भमण्डितम् ॥११॥
अष्टस्तंभयुतं वापि चतुःस्तम्भमथापिवा ।
तोरणैः सहितं कुर्याद्वितान वर शोभितम् ॥१२॥
द्वारेषु शंखचक्रादि पताका ध्वज लाञ्छितम् ।
अलङ्कुर्यात्प्रतिस्तंभं स्थापयेत्कलशान् शुभान् ॥१३॥
शुद्धतण्डुलराशींश्च पूर्णपात्रैरलङ्कृतान् ॥

इस व्रत की विशेष विधि बताते हैं-व्रत करने वाला अष्टमी को ही प्रातःकाल उठकर आलस्य त्याग कर शौचादिक क्रियायें करके किसी पवित्र महानदी में-सरोवर में-पवित्र कूप अथवा बावली में स्नान करके प्रातः सन्ध्यावन्दनादि नित्यकर्म कर के देव-ऋषि-पितरों को तर्पण करके हविष्यान्न एक ही बार स्वल्प-भोजन कर ब्रह्मचर्यपालन करता हुआ संयम से रहे। रात में पृथिवी पर ही पवित्र आसन बिछाकर शयन करे। हे गौतम !

नवमी को प्रातःकाल ब्रह्ममुहूर्त में उठकर शान्त-दान्त एकाग्रचित्त से प्रभु का ध्यान कर शास्त्रीय विधिपूर्वक तीर्थादिक जो उपलब्ध हो उसमें स्नान करे। नित्यकर्म पूर्ण करके सुन्दर सोलहस्तंभ का-आठस्तंभों का अथवा चारस्तंभों का रमणीय मण्डप बनावे। तोरण-वन्दनवार चन्दोवा पताका ध्वजा से मण्डप को सजावे। प्रत्येक द्वार पर शंख चक्र-धनुष-बाण-उर्ध्वपुण्ड तिलक से अलङ्कृत करे। प्रत्येक स्तम्भ में चावल पर कलश जल से भरके पल्लव पधरा के उस पर चावल भर के पूर्णपात्र परई रखे। इस प्रकार मण्डप रचना करे॥ (श्लोक ८ से १३ पर्यन्त)

मध्ये तु चत्वरं कुर्याच्चतुर्हस्त प्रमाणतः ॥१४॥
हस्तमात्रोत्थितं रम्यं चतुरस्रं महामुने !
पलद्वयमितां कुर्याज्जानकीप्रतिमां शुभाम् ॥१५॥
काञ्चनीमथवा शक्त्या कुर्यादेकपलोन्मिताम् ।
तदर्धेन तदर्धेन कुर्याच्छक्त्या च भूमिजाम् ॥१६॥
वित्तशाठ्यमकुर्वन्नैव राजतीमपि कारयेत् ।
औदुम्बरीं पैतलीं वा मृण्मयीं वृक्षजामथ ॥
आचार्यं वृणुयाच्चैव सम्पूज्य दानग्राहकम् ॥१७॥
जानकी प्रतिमादानं करिष्येऽहं द्विजोत्तम !
अद्यारभ्यदशम्यान्तं ब्रह्मचर्यपरोभव ॥१८॥

मन्त्रात्मिकास्तु प्रतिमाः स्वर्णपत्रोपरिन्यसेत् ।
स्वर्णस्य प्रतिमादानं सर्वथावर्जयेत्कलौ ॥१६॥
यथाशक्ति हलं कुर्य्यात् काञ्चनं किल गौतम ।
राजतं क्षेत्रममलं स्वर्णसिंहासनं तथा ॥२०॥

मण्डप के मध्य में चार हाथ लम्बा चौड़ा तथा एक हाथ ऊंचा रमणीय सुन्दर चौतरा बनावे । हे महामुने ! पूजा के लिये दो-पल अथवा एक पल चार तोला की सोना की श्रीजानकीजी की मूर्ति बनावे । उसका आधा अथवा उसका भी आधा यथा-शक्ति श्रीभूमिनन्दनीजू की मूर्ति बनावे । धन व्यय करने की कृपणता त्यागकर शक्ति न हो तो चांदी की गूलर की पीतल की-मिट्टी की अथवा काष्ठ को प्रतिमा बनावे । पश्चात् मूर्ति का दान लेने वाले सुयोग्य सदाचारी ब्राह्मण को निमन्त्रित कर पूजा करके वरण करते हुए प्रार्थना करे, हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! मैं श्रीजानकी जी की प्रतिमा का कल दान करूंगा, आप कृपाकर आज से ही दशमी पर्यन्त तीन दिन ब्रह्मचर्य से संयमपूर्वक रहें । एक बात स्मरण रखे सोना की मूर्ति बनाकर उसका दान देना तो कलि-युग में सर्वथा निषिद्ध है, क्योंकि लोभवश ब्राह्मण उसको बेच लेगा पूजा न करेगा, चोरी हो जायगी इसलिये जितना दान देना हो उतना सोना-चांदी रखकर उस पर मन्त्र द्वारा मूर्ति की भावना करके उसीका दान देवे । हे गौतम ! यथा शक्ति सोने

का हल तथा चांदी की भूमि (खेत) बनावे तथा सोने का सिंहासन बनावे। (श्लोक १४ से २० पर्यन्त)

आचार्यं शास्त्रकुशलं वेदाध्ययन कोविदम् ।
वृणुयाद्विमलाचारं मण्डपे साङ्गमासनैः ॥२१॥
अन्तरीयोत्तरीयैश्च पञ्चपात्रादिभिर्व्रती ।
श्रीफलादिभिरभ्यर्च्य गन्धमाल्यानुलेपनैः ॥२२॥
मध्यवेद्यां समालेख्य विचित्रैर्वर्णकैस्तथा ।
पद्ममष्टदलं तत्र स्थापयेत्कलशं ततः ॥२३॥
तत्र सिंहासनं रम्यं संस्थाप्य नियतेन्द्रियः ।
तत्राधिवासनं कुर्यादग्न्युत्तारण पूर्वकम् ॥२४॥
प्रतिमायां विधानेन देवीमावाहयेत्ततः ।
प्राणानायम्य मूलेन चैकाग्रेणैव चेतसा ॥२५॥

वेदाध्ययन तथा शास्त्रीयपूजा पद्धति में प्रवीण निर्मल आचार ब्यवहार सम्पन्न पवित्र श्रीवैष्णव श्रीसीतारामजी की भक्ति करनेवाले ब्राह्मण को आचार्य वरण करे। उनको धोती चादर-गमछा-पञ्चपात्र-आसन श्रीफल दक्षिणा-चन्दन-पुष्प-फूलमाला आदि देकर पूजा करे। मध्यवेदी पर सुन्दर वस्त्र बिछाकर अनेक-रंगों से अष्टदल पद्म बनाकर मध्य में कलश स्थापन करे। उसके पास सुन्दर सिंहासन पर श्रीजानकीजी की प्रतिमा पधरावे।

अग्नि उतारण करके विधानपूर्वक श्रीजूका आवाहन करे। "श्रींसीतायै नमः" इस मूलमन्त्र से एकाग्रचित्त से प्राणायाम करे। (श्लोक २१ से २५ पर्यन्त)

मूलमन्त्रस्य जनकं मुनिं विन्यस्य मूर्द्धनि।
मुखेछन्दश्च गायत्री सीतादेवीं हृदिन्यसेत् ॥२६॥
नाभौ तु विन्यसेद् ब्रह्मन् लक्ष्मीबीजं सविन्दुकम्।
पादयोश्च नमः शक्ति नमो विन्यस्य मन्त्रवित् ॥२७॥
श्रां श्रीमित्यादिभिर्बीजैर्दीर्घषट्स्वरसंयुतैः।
कृत्वा कर षडङ्गेषु न्यासं ध्यायेत्ततो व्रती ॥२८॥
सुवर्णाभाम्बुजकरां रामालोकनतत्पराम्।
श्रीराघवान्वितां सीतां चिन्तयेद्धृदि सर्वदा ॥२९॥
इतिध्यात्वा समुच्चार्य मूलमन्त्रकृताञ्जलिः।
सविन्दुकमलाबीजं पूर्वमुच्चार्य गौतम ।३०॥
सीतायै इति पश्चात्तु नमः शब्दं वदेत्किल।
सम्पूज्य प्रतिमां चैव कृत्वैवमधिवासनम् ॥३१॥
सम्पूज्य दद्याद्विप्राय रामभक्ताय देशिक।
विष्णुभक्तान्समाहूय श्रद्धा भक्ति समन्वितः ॥३२॥
ततस्तु प्रथमेयामे नित्यपूजाविधिर्व्रती।

कृत्वा नैमित्तिकीं पूजां दानस्यार्थे विशेषतः ॥३३॥
ततो द्वितीये प्रहरे–गीतवाद्यपुरः सरम् ।
मध्यान्ह समये भक्त्या कुर्य्यादेकाग्रचेतसा ॥३४॥
महामहोत्सवं दिव्यं महामाधुर्य्यभूषितम् ॥

प्राणायाम के पश्चात् सङ्कल्प–ऋष्यादिन्यास अङ्गन्यास-करन्यास आदि करके श्रीजानकीजी का ध्यान करे तथा मूलमन्त्र से हाथ जोड़कर प्रतिमा की पूजा करके अधिवास (शय्याधिवास धान्याधिवासजलाधिवास पुष्पाधिवास) आदि जो कर सके तथा प्रतिमा आचार्य को देकर सब विधि करवावे। प्रथम प्रहर में यह सब करके नित्यनियम की पुजा समाप्त करे। तब द्वितीय प्रहर मध्याह्न में नैमित्तिक महा-पूजा विशेष रूप से करे-गाना-बजाना-कीर्तन नृत्य-आनन्द आदि महामाधुर्यरसभरे भाव से महा महोत्सव ऐसा करे कि उसमें एकाग्रचित्त से तल्लीन हो जाय। (श्लोक २३ से ३४)

* अथ पूर्वाह्न कृत्यम् *

अथ पूजन क्रमः। मण्डपे प्रविश्य, आदौ स्वस्त्ययनं कृत्वा श्रीगणेशेश्वरं-दिनकरं वह्निं विष्णुं शिवं-शिवां श्रीहनूमन्तं सम्पूज्य कलश स्थापनं कुर्य्यात्। ततः! "श्रीं सीतायै नमः" इति मूलमन्त्रेण प्राणायामं कृत्वा॥ ॐ अस्य श्रीतापडक्षर

मन्त्रस्य जनक ऋषिः। गायत्री छन्दः। श्रीसीता देवता। श्रीं बीजम्। नमः शक्तिः। सीतायैकीलकम्। श्रीसीता इष्ट प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः॥ ॐ जनक ऋषये नमः मूर्धिन। ॐ गायत्री छन्दसे नमः मुखे। ॐ सीतादेवतायै नमः हृदि। ॐ श्रीं बीजाय नमो नाभौ। ॐ नमः शक्त्यै नमः पादयोः। ॐ सीतायै कीलकायै नमः सर्वाङ्गे॥ इति ऋष्यादिन्यासः। अथ करन्यासः—ॐ श्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ श्रीं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ श्रूं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ श्रैं अनामिकाभ्यां नमः। ॐ श्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ श्रः करतलकर पृष्ठाभ्यां नमः॥ इति करन्यासः। अथ हृदयादिन्यासः—ॐ श्रां हृदयाय नमः। ॐ श्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ श्रूं शिखायै वषट्। ॐ श्रैं कवचाय हुँ। ॐ श्रौं नेत्राभ्यां वौषट्। ॐ श्रः अस्त्राय फट्। इति हृदयादिन्यासः॥

अब पूजन का क्रम दिखाते हैं-प्रथम मण्डप में प्रवेश कर स्वस्तिवाचन मङ्गल पाठ करके-श्रीगणपति-श्रीहनुमानजी-सूर्य-अग्नि-विष्णु-शिव-गौरी आदि का पञ्चोपचार पूजन करके तब श्रीरामायनमः श्रीरामभद्रायनमः श्रीरामचन्द्राय नमः इन तीन मन्त्रों से आचमन करके "श्रीराघवेन्द्राय नमः" पढ़कर हाथ धो लेवे। तब मूलमन्त्र (श्रीं सीतायैनमः) से प्राणायाम करके सङ्कल्प पढ़े। तब उपर्युक्त ऋष्यादिन्यास-करन्यास तथा हृदयादिन्यास करे। पश्चात्

ॐ शंखाय नमः। ॐ घण्टाय नमः। ॐ आचार्य्याय

नमः। ॐ शंशाङ्गाय नमः। ॐ वं वाणेभ्यो नमः। ॐ चं चन्द्रिकायै नमः। ॐ मुं मुद्रिकायै नमः।"

इन मन्त्रों को पढ़कर भगवत्पार्षद आयुध-आचार्य को प्रणाम करके ध्यान करे--

ॐ अङ्के यज्ञेशयज्ञे युत दिवसकरा द्योतसुद्योत गेहे—
अङ्के सिंहासनं सन्मणिवररचितं हैमिकं मैथिलस्य।
सद्धि द्विष्कुष्टितोष्टच्छद्जलजमलं शौरिणोष्टौ करस्थ—
सख्यो गौरीमुखास्ते स्वथशुभचरिता मध्यगा जानकीति॥
ॐ सुवर्णाभाम्बुजकरां रामालोकनतत्पराम्।
सीता भगवतीं ध्याये सर्वकामार्थं सिद्धये॥

ॐ श्रींसीतायै नमः। श्रींसीता आवाहयामि। आसनं समर्पयामि। पाद्यं-अर्घ्यं-आचमनीयं-मधुपर्क-स्नानीयं-वस्त्रं-भूषणं-चन्दनं-सौभाग्यद्रव्यं-पुष्पं-पुष्पमालां-धूपं-दीपं-नैवेद्यं-शुद्धाचमनीयं ताम्बूलं-सुगन्धं-नीराजनं-पुष्पाञ्जलिं-समर्यामि-ततः प्रणाम-परिक्रमा-प्रार्थनादि कुर्यात्।

इस प्रकार ध्यान करके आवहन से प्रार्थना पर्यन्त षोडशोपचार पूजा करे तब—

गौरी-श्री-भू तथा लीला-मेधा सावित्रि वीजया।
जयाद्यष्टसखीमुख्या पद्मपत्रेषु संस्थिता॥
तन्मध्ये जानकीदेवी सर्वशक्त्यादि वन्दिता।
पूजनीया प्रयत्नेन जन्मोत्सव वासरे॥

ॐ गौर्य्यैनमः। ॐ श्रियै नमः। ॐ भूदेव्यै नमः। ॐ

लीलादेव्यै नमः । ॐ मेधादेव्यै नमः । ॐ सावित्र्यै नमः ॐ विजयायै नमः ॐ जयायै नमः ।

इन आठों सखियों का कमल के आठों दल पर पूर्वादि क्रम से पूजन करके मध्यमें सर्वशक्तियों से वन्दनीय श्रीजानकीजी का जन्मउत्सव के दिन प्रयत्न पूर्वक अवश्य पूजन करे ।

ततश्च पूजयेद्विद्वान् राजानं जनकं व्रती ।
"ॐ देवी पद्मालयासाक्षादवतीर्णा यदालये ।
मिथिलाधिपतयेतस्मै जनकाय नमोनमः ॥
ॐ जंजनकाय नमः ।" ततः शतानन्दं पूजयेत्—
ॐ निधानं सर्वविद्यानां विद्वत्कुलविभूषणः ।
जनकस्य पुरोधास्त्वं शतानन्दाय ते नमः ॥
ॐ शतानन्दाय नमः । ततः हलपूजनम्—
जीवस्याखिलं विश्वं चालयन्वसुधातलम् ।
प्रादुर्भावयते सीतां सीरतुभ्यं नमोऽस्तुते ॥
ॐ हलायनमः ॥ ततः सुभगापूजनम्—
त्वयैवोत्पादितं सर्वं जगदेतच्चराचरम् ।
त्वमेवासि महामाया मुनीनामपि मोहिनी ॥
त्वयायत्ता इमे लोकाः श्रीसीतावल्लभा परा ।
वन्दनीयासि देवानां सुभगे त्वां नमोम्यहम् ॥
ॐ सुभगायै नमः । पश्चात् ॐ श्रीचन्द्रकलायै नमः ।
बहिर्मण्डल वर्तिन्यो षोडशान्यास्तुदेवता ।

अणिमाद्यभिधा पूज्या बहिः सर्वत्र्यृचस्ततः ॥
सम्पूज्यावरणान्येव मुख्या देव्यास्ततो व्रती ।

ॐ सर्वत्रगाभ्यो नमः । ॐ अणिमादिभ्यो नमः । इति सम्पूज्य । ॐ दिव्या वरण सहितायै श्रीसीतायै नमः । पुष्पाञ्जलि समर्प्य प्रणमेत्पुनः ।

(इति पूर्वाह्णिक पूजनम्)

तत्पश्चात् विद्वान् व्रत करने वाला राजा श्रीजनकजी का पूजन करे । कमलपुष्प की कोमल शय्या में निवास करने वाली श्रीजू साक्षात् स्वयं जिनके घर अवतीर्ण हुई हैं, ऐसे श्रीमिथिलेश महाराज जनकजी को बारंबार नमस्कार है । ॐ श्रीजनकाय नमः । इस मंत्र से श्रीजनकजी का पूजन करे । तत्पश्चात्—सर्वविद्याओं के निधान विद्वानों के कुल के विभूषण श्रीजनकराज के पुरोहित हे श्रीशतानन्दजी ! आपको नमस्कार है । ॐ शतानन्दाय नमः । इस मन्त्र से श्रीशतानन्दजी का पूजन करे ! तत्पश्चात्—अखिल संसार के जीवों का भरणपोषण करने के लिये जिसको पृथिवी में जोता जाता है तथा जिसकी नोंक से श्रीजानकीजी प्रकट हुई हैं ऐसे हल को नमस्कार है । ॐ हलाय नमः । यह मंत्र पढ़कर हल का पूजन करे । तब श्रीसुभगाजी का पूजन करे—आपने ही यह सचराचर जगत् उत्पन्न किया है । मुनियों को भी मोहित करने वाली आप महामाया हैं, सारा संसार आपके ही आधीन है । श्रीसीताजी आपको प्राण से भी प्रिय हैं । आप सब देवताओं द्वारा वन्दनीय हैं । हे सुभगे !

आपको प्रणाम है। ॐ श्रीसुभगायै नमः। इस मन्त्र से श्रीसुभगा जी का पूजन करे। तब अष्टदल कमल के दलों पर "॥ जयादिभ्यो नमः ॥" मन्त्र पढ़कर आठ सखियों का भक्ति पूर्वक गन्ध-पुष्प-चन्दन अक्षतादिक पञ्चोपचारों से पूजन करे तब अणिमादिक बाह्य आवरण देवताओं का पूजन करे तथा श्रीसूक्त की षोडश ऋचाओं का पूजन करे अणिमादिक षोडश देवताओं के नाम ॐ अणिम्ने नमः। ॐ महिम्ने नमः। ॐ गरिम्णे नमः। ॐ लघिम्ने नमः। ॐ प्राप्त्यै नमः। ॐ प्राकाम्याय नमः। ॐ ईशित्वाय नमः। ॐ वशित्वाय नमः। ॐ वलायै नमः। ॐ विमलायै नमः। ॐ कमलायै नमः। ॐ वनमालिकायै नमः। ॐ विभीषिकायै नमः। ॐ मालिकायै नमः। ॐ शाङ्कर्य्यै नमः। ॐ वसुमालिकायै नमः। ॐ हिरण्यवर्णामित्यादि षोडशभ्यः ऋग्भ्यो नमः। ॐ अणिमादिभ्यो नमः। ॐ दिव्यावरण सहितायै श्रीसीतायै नमः। इस मन्त्र से सबका पूजन कर "श्री सीतायैनमः" पढ़कर पुष्पाञ्जलि समर्पण करे। प्रणाम करे। इस प्रकार यह प्रथम प्रहर का पूजन क्रम सम्पूर्ण हुआ॥

॥ अथ मध्याह्न पूजनम् ॥

ततः मङ्गलाचारपूर्वकं मण्डपगृहे प्रविश्य आसनशुद्धि विधाय जन्मोत्सवपूजनमाचरेत्। तदुक्तंमहोत्सवार्णवे--

आसने उपविश्यादौ मूलं विन्यस्य पूर्ववत्।
चतुरस्रं च षट्कोणं त्रिकोणं च पुरस्ततः ॥१॥
कृत्वा मण्डलमाधारं तत्रसम्पूज्य मन्त्रवित्।

औदुम्बरीं पैतलीं वा मृण्मयीं वृक्षजामुत ॥२॥
कुड्ये (कुट्टे) पट्टेऽथवा लेख्या वर्णकैः प्रतिमां वरां ।
लेख्यश्च सूतिकागारं सर्वतश्च पटावृतम् ॥३॥
पर्य्यङ्क शयनेसुप्ता तत्रराज्ञी महामतिः ।
तस्याः समीपतः सुप्ता मैथिलीस्तनपायिनी ॥४॥
जातकर्मकरो लेख्यो जनकश्च महामतिः ।
कुशध्वजप्रिया लेख्या धर्मवृत्ता सुदर्शना ॥५॥
शतानन्द पुरोधाश्च लेखनीयः प्रयत्नतः ।
इत्यादि चरितं लेख्यं जानकीजन्म सम्भवम् ॥६॥

पश्चात् मङ्गलाचरण पूर्वक मण्डप गृह में प्रवेश कर "अपवित्रः पवित्रो वा" तथा "पृथिवीत्वया धृता" मन्त्रद्वारा आसन शुद्धि करके श्रीजानकीजन्मोत्सव पूजन प्रारम्भ करे । जैसा कि-"महोत्सवार्णव" ग्रन्थ में कहा है--

आसन पर बैठकर पूर्वाह्निक पूजन में किया था उसी प्रकार आचमन-प्राणायाम-संकल्प-न्यासादिक मूलमन्त्र द्वारा करके अपने सम्मुख चतुष्कोण-त्रिकोण अथवा षट्कोण यन्त्र बनाकर उस पर मन्त्र जानने वाला आधार शक्ति का पूजन करे । तब सोना चांदी की मूर्ति के अभाव में गूलर की-पीतल की-मिट्टी की अथवा काष्ठ की मूर्ति पधरा कर कपड़े पर अथवा कागज पर सुन्दर चित्र बनावे, जिसमें चारों ओर से कपड़े का परदा लगा हुआ प्रसूतिगृह का दृश्य हो, उसमें पलङ्ग पर पौढ़ी हुई महामति श्रीसुनयना महाराणी हों, तथा उनके समीप में स्तनपान

करती हुई लेटी हुई बालिका रूप में श्रीमैथिलीजी हों। उस पडदे के बाहर में महामति श्रीजनकजी जातकर्म कर रहे हैं तथा श्रीशतानन्दजी पुरोहित जातकर्म करवा रहे हैं ऐसा दृश्य अंकित करे। पास ही दूसरे सूतिकागार में श्रीकुशध्वज महाराज की महाराणी श्रीसुदर्शनाजी जो अत्यन्त धार्मिक हैं उनका चित्र बनावे। इस प्रकार श्रीजानकीजी के जन्म समय का सुन्दर मनोहर दृश्य उपस्थित करे।

मूलेन शंखं संस्थाप्य जलमासिच्य निर्मलम्।
चिन्मयं तत्र संचिन्त्य तीर्थमङ्कुशमुद्रया ॥७॥
आकृष्य मूलमन्त्रेण सप्तवाराभिमन्त्रितैः।
जलैः सम्प्रोक्षयेद्विद्वान् सामग्रीं पूजनोचिताम् ॥८॥
पात्राणि ताम्रहेमाद्यैर्निर्मितानि ततो मुनेः।
पाद्यार्थमर्घ्यदानार्थमधुपर्कार्थमेव च ॥९॥
तथैवाचमनीयार्थमेवमासादयेत् क्रमात्।
एकस्मिन्नथवा पात्रे पाद्यादीनि प्रकल्पयेत् ॥१०॥
पात्राणीत्थं समासाद्य ततोऽन्तर्यागमाचरेत्।
पुष्पाञ्जलिं समादाय ध्यायेद्वै प्रतिमागताम् ॥११॥
महामतेस्तथा राज्ञो जनकस्य महात्मनः।
हलचालनतः साक्षादाविर्भूतां स्वतः श्रियम् ॥१२॥
सीतांदेवीं हृदिध्यात्वा मूलमन्त्रेण मन्त्रवित्।
पुष्पाञ्जलिं त्रयं देवी प्रतिमां मूर्ध्नि निक्षिपेत् ॥१३॥

तब मूलमन्त्र (श्रींसीतायै नमः) से शंख पधराकर उसमें

निर्मल पवित्र जल भर के "अंकुशमुद्रा" से तीर्थों का आकर्षण कर सच्चिदानन्द स्वरूप जलकी भावना कर उस जल को मूलमन्त्र से सातबार अभिमन्त्रित करके उसको पूजा की सामग्री पर तथा अपने तथा यजमान पर भी सिंचन करे। पश्चात्-सोना के-तामा के अथवा नये मिट्टी के पात्र (पाद्यअर्घ्य-आचमन-मधुपर्क तथा स्नान के लिये) पञ्चपात्र रखे (पधरावे) अथवा धातु पात्र एक ही हो तो अभाव में एक ही से कार्य निर्वाह करे। पात्रों को स्थापित करके उसमें औषधि-तुलसी-चन्दन डालकर तब मानसी ध्यान में पूजा करे-ऐसी भावना करे कि श्रीविदेह महाराज महाराणी हल चला रहे हैं उससे साक्षात् स्वयं श्रीसीताजी प्रकट हुई हैं, सामने पधराई हुई प्रतिमा में वही साक्षात् विराजमान हैं ऐसा ध्यान कर मन्त्र का रहस्य जानने वाला भक्त मूलमन्त्र पढ़कर प्रतिमा के शिर पर ३ तीनवार पुष्पाञ्जलि समर्पण करे॥

"हिरण्य वर्णां" मन्त्रेण देवी मावाहयेत्ततः।
आवाहनादि मुद्राणामष्टकं सम्प्रदर्शयेत् ॥
"ताम्मआवह" मन्त्रेण दद्याद्दिव्यासनं मुने !
"अश्वपूर्णां" मर्घ्यदाने पाद्यं "कांसोस्मि" मन्त्रतः ॥
मधुपर्कं ततो दद्यात् सीतादेव्यै विधानतः।
"चन्द्रां प्रभेति" मन्त्रेण पद्यादाचमनीयकम् ॥
'आदित्यवर्णां' इत्युक्तो मन्त्रः पञ्चामृते भवेत्।
"आप्यायस्वेति" मन्त्रेण पयसास्नापयेत्ततः ॥
"दधिक्रामण्ततोदध्ना घृतेन" घृतमित्यतः।

मधुना "मधुव्वाता" च अपां सर्करा मुने ॥
यं-वं-रं-लं मन्त्रेण ततः तीर्थाम्बुभिः क्रमात् ।
"उपैतुमामिति" प्रोक्तः सीतायाः स्नपने मनुः ॥
स्वर्णसिंहासने रम्ये प्रतिमां स्थापयेद्व्रती ।
वासोभिः "क्षुत्पिपासेति" पूजयेद्विमलोत्तमैः ॥
'गन्धद्वारामिति' भवेद्दाने गन्धादिकस्य तु ।
मनसः काममित्याहुर्मन्त्रमाभरणादिके ॥
कस्तूरी कुसुमोपेतैः कर्पूरागरुचन्दनैः ।
प्रतिमां पूजयेद्भक्त्या ततः पुष्पैः स्वकालकैः ॥
सुगन्धैः "कर्दमेनेति" मन्त्रेण किल गौतम ।
अर्च्चयेत्तुलसीपत्रैः कोमलैर्मञ्जरीयुतैः ॥
प्रतिमां मूलमन्त्रेण शतमष्टोत्तरं शतम् ।
दशाङ्गैर्गुग्गुलैर्दद्याद्धूपमापः श्रजंत्विति ॥
दीपं तु साज्यवर्तीभिरार्द्रां पुष्करणीमिति ।
नैवेद्यं घृतपक्वान्नैर्नाना व्यञ्जन संयुतैः ॥
प्रदद्यात्पायसाद्यैरप्यार्द्रां पुष्करिणीमिति ।
राज्ञै च गुड लड्डूकान् महामत्यै निवेदयेत् ॥
ताम्बूलञ्च ततो दद्यात्कर्पूराद्यैः सुसंयुतम् ।
साङ्गता सिद्धये देया यथाशक्ति च दक्षिणा ॥
नीराजयेत्ततो देवीं प्रणामं तदनन्तरम् ।
"ताम्म आवह" मन्त्रेण पुष्पाञ्जलिमथार्पयेत् ॥

ततः सीतापदाम्भोजद्वयं संस्पृश्य मङ्गलम् ।
कराञ्जलिपुटं बध्वा प्रार्थयेद्रामवल्लभाम् ॥
भक्त्या परमया ब्रह्मन्नाभिकोमलसूक्तिभिः ।
सम्प्रार्थ्यं जानकीमेवं दण्डवत् प्रणमेत्पुनः ॥
पुष्पाञ्जलिं पुनर्दत्त्वा स्तुवीत परमेश्वरीम् ।
स्तुत्त्वेत्थं जानकींदेवीं गीतवाद्यादिभिर्व्रती ।
रात्रौ जागरणैः सर्वां तां रात्रिमभिवाहयेत् ॥

उपर्युक्त पद्धति के अनुसार पूजा प्रकार को पुनः स्पष्ट करते हुए कहते हैं अथ ध्यानम् ॥

ध्यायेत्कमल पत्राक्षीं भूमिजां बालरूपिणीम् ।
पर्यङ्कशयने सुप्ताँ तत्र राज्ञीं महामतिम् ।।
तस्याः समीपतः सुप्तां मैथिलीं स्तनपायिनीम् ।
श्रीउर्मिलां तथाध्यायेत् माण्डवीं गुणमण्डिताम् ॥
सुदर्शनाङ्के तिष्ठन्तीं श्रुतिकीर्तिं विभावयेत् ।
इत्युक्त्वा मूलमन्त्रेण पुष्पाञ्जलित्रयं क्षिपेत् ॥

उपर्युक्त रीति से "श्रीसीतायैनमः" मूलमन्त्र से सातबार जलअभिमन्त्रित कर पूजाद्रव्य तथा अपने आसन इत्यादि पर छींट कर मूलमन्त्र से ही प्राणायाम न्यासादिक करके शंख-घंटादिकपार्षद पूजन करके श्रीजानकीजी के श्रीउर्मिलाजी-श्री माण्डवीजी तथा श्रीश्रुतिकीर्तिजी के सहित उपर्युक्त ध्यान करने के मन्त्रों का उच्चारण कर मूलमन्त्र से ३ तीनवार पुष्पाञ्जलि समर्पण करे तत्पश्चात्––

ॐ हिरण्यवर्णां हिरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम् ।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥

इस मन्त्र को पढ़कर मूलमन्त्र द्वारा आवाहन करे। पश्चात्—

ॐ ताम्म आवाह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥

यह मन्त्र पढ़कर मूलमन्त्र से आसन प्रदान करे। तब—

ॐ कांसोस्मितां हिरण्यप्रकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तांतर्पयन्तीम् ।
पद्मे स्थिता पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥

इस मन्त्र को पढ़कर "श्रीसीतायै नमः पाद्यं समर्पयामि" कह कर पाद्य समर्पण करे। तत्पश्चात्—

ॐ अश्वपूर्णां रथमध्यां हस्तिनाद प्रमोदिनीम् ।
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मादेवी जुषताम् ॥

"श्रीं सीतायै नमः अर्घ्यं समर्पयामि" मन्त्र पढ़कर अर्घ्य समर्पण करे तब—

ॐ चन्द्रां प्रभासां यशसाज्वलन्तीं श्रियंलोकेदेव जुष्टामुदाराम् ।
ताँ पद्मनेमीं शरणं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मेनश्यतां त्वां वृणोमि ॥

"श्रीं सीतायै नमः आचमनीय समर्पयामि" मन्त्र पढ़कर आचमन प्रदान करे। तत्पश्चात्—"श्रींसीतायैनमः" इदं मधु पर्क्कं समर्पयाम" मन्त्र पढकर मधुपर्क अर्पण करे। तब—

ॐ आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोथ बिल्वः ।
तस्य फलानि तपसानुदन्तुमोयान्तरायाश्च बाह्याअलक्ष्मीः ॥

"श्रींसीतायैनमः" इदं पञ्चामृत स्नानीयं समर्पयामि" पढकर

पञ्चामृत स्नान करावे तब--

"ॐ आप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोमवृष्ण्यम् । भवावाज-स्य सङ्गथे ।" पयः स्नानं समर्पयामि श्रीसीतायैनमः । मन्त्र पढकर पयः (दूध) स्नान करावे । तब--

ॐ दधिक्राव्णो अकारिषम् जिष्णोरश्वस्य वाजिनः ।
सुरभिनो मुखाकरत् प्रणआयुगूंषितारिषत् ॥

दधिस्नानीयं समर्पयामि श्रीसीतायै नमः । पढकर दही से स्नान करावे । पश्चात्--

ॐ घृतं मिमिक्षे घृतमस्ययोनि घृतेश्रितो घृतमस्यधाम ।
अनुष्वधमावह मादयस्व स्वाहा घृतं वृषभवक्षि हव्यम् ॥

ॐ घृतस्नानं समर्पयायि श्रीसीतायै नमः । यह मन्त्र पढकर घृत स्नान समर्पण करे । पश्चात्--ॐ मधुवाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः मधुनक्तमुतोषसो मधुमत्पा-र्थिवगूँरजः मधुद्यौरस्तु नः पिता मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाँ अस्तु सूर्यः माध्वीर्गावो भवन्तु नः । इदं मधुस्नानीयं समर्पयामि श्रीं सीतायै नमः" मन्त्र पढकर मधुस्नान करावे । पश्चात्--

ॐ अपागूँरसमुद्वयसगूँसूर्येसन्तगूँ समाहितम् । अपागूँरस-स्ययो रसस्तंव्वो गृण्हाम्युत्तममुपयामगृहीतोसीन्द्रायत्वा जुष्टङ्गृह्णा-म्येषते योनिरिन्द्रायत्वा जुष्टतमम् । श्रीसीतायै नमः सर्करास्नानं समर्पयामि । यह मन्त्र पढकर शक्कर से स्नान करावे । पश्चात्--

ॐ मन्दाकिन्याऽसमानीतं हेमाम्भोसहवासितैः ।
स्नानं कुरुष्व देवेशि ! सलिलैश्च सुगन्धिभिः ॥

ॐ-यं-वं-रं-लं श्रीसीतायै नमः।

तीर्थं स्नानं समर्पयामि मन्त्र पढ़कर तीर्थ जल से स्नान करावे, तत्पश्चात्--

ॐ उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह।
प्रादुर्भूतोऽस्मि राष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिमृद्धिं ददातु मे॥

श्रीसीतायै नमः शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि। मन्त्र पढ़कर शुद्ध जल से स्नान करावे। तत्पश्चात्--

ॐ क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम्।
अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णुद मे गृहात्॥

"श्रीसीतायै नमः इदं वस्त्रम् समर्पयामि" मन्त्र पढ़कर वस्त्र समर्पण करे। तत्पश्चात्--

ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्।
ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्॥

"श्रीसीतायै नमः" चन्दनं समर्पयामि। मन्त्र पढ़कर चन्दन समर्पण करे। तत्पश्चात्--

ॐ मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि।
पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः॥

श्रीसीतायै नमः आभरण भूषणादिकम् समर्पयामि। मन्त्र पढ़कर आभूषण पहरावे। तत्पश्चात्--

"कस्तूरी कुंकुमोपेतं कर्पूरागरुचन्दनम्।"

समर्पयामि श्रीसीतायै नमः पढ़कर हरिचन्दन समर्पण करे।

तब--

ॐ अहिरिव भोगैश्वर्य्यैति वा हुँ ज्याया हेतुं परिवाधमानः हस्तघ्नो विश्वाव्वयुनानि विद्वान् पुमान् पुमागूंसं परिपातु विश्वतः ।

श्रीसीतायै नमः सौभाग्य द्रव्यं समर्पयामि । पढकर सिन्दूर टिकुली-चोटी-चूडी-कर्णफूल-कंकण आदि समर्पण करे । तत्पश्चात्--

ॐ कर्दमेन प्रजाभूता मयि सम्भव कर्दम ।

श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम् ॥

"श्रीसीतायै नमः" समयानुकूल सुगन्ध पुष्पाणि कोमल मञ्जरी युतानि तुलसीदलानि च समर्पयामि ॥

मन्त्र पढकर पुष्प तुलसी समर्पण करे तथा मूलमन्त्र से १०८ अष्टोत्तरशत तुलसीदल चढावे ।

ॐ आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे ।

नि च देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले ॥

दशाङ्गं गुग्गुलं धूपं कृष्णागरुसमन्वितम् ।

धूपं देवि प्रदास्यामि सीते ! त्वं प्रतिगृह्यताम् ॥

"श्रीसीतायै नमः धूपं समर्पयामि" मन्त्र पढकर धूप समर्पण करे । पश्चात्--

ॐ आर्द्रां यःकरिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम् ।

सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥

ॐ आज्यञ्च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया ।

दीपं गृहाण वैदेही ! त्रैलोक्यतिमिरापहम् ॥

दीपं संदर्शयामि "श्रीसीतायै नमः" मन्त्र पढकर दीप समर्पण

करे । तत्पश्चात्--

ॐ आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिङ्गलां पद्ममालिनीम् ।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥

एतानि नानाविध नैवेद्यानि समर्पयामि "श्रीसीतायै नमः" मन्त्र पढकर नैवेद्य अर्पण करे ।

ॐ आचम्यतां त्वया देवि ! भक्तिं मे ह्यचलां कुरु ।
इप्सितं मे वरं देहि परत्र च पराङ्गतिम् ॥

इदमाचमनीयं समर्पयामि "श्रीसीतायै नम;" मन्त्र पढकर शुद्ध आचमन समर्पण करे । अथवा पीछे कहे गये-"ॐ चन्द्रां प्रभासां०" वैदिक मन्त्र सहित आचमन करावे । तत्पश्चात्--

"ताम्बूलं गृह्यतां देवि ! पूगीफलयुतं तथा ।
दक्षिणाद्रव्य संयुक्तं श्रीसीतायै नमो नमः ॥"

इस मन्त्र को पढकर पान-सुपारी-इलायची आदि दक्षिणा सहित ताम्बूल समर्पण करे । उसके बाद--

"ॐ सुनेत्रा देव्यै नमः ।" मन्त्र पढकर श्रीसुनयनाजी का पाद्य-अर्घ्य-आचमन-स्नान-वस्त्र-भूषण-चन्दन सौभाग्यालङ्कार-पुष्प-धूप-दीप-नैवेद्य-ताम्बूल-पूगीफल (पान-सुपारी) दक्षिणाद्रव्य सहित षोडशोपचार पूजन करे । पश्चात्--

ॐ श्रीसीताजननी मातर्महिषी जनकस्य च ।
पूजां गृहाण मद्दत्तां महामतिं नमोस्तुते ॥

मन्त्र पढकर प्रणाम करे तब--

सुनेत्रा गर्भ सम्भूता लक्ष्मणस्य प्रिया वरा ।

सुमित्रायाः स्नुषा देवि ! उर्मिलायै नमो नमः ॥

ॐ श्रीउर्मिलादेव्यै नमः । मन्त्र पढ़कर श्रीउर्मिलाजी का पूजन करे । तत्पश्चात्--

ॐ सुदर्शनासुता देवि ! श्रीमद्भरतवल्लभा ।
कैकेय्याश्च स्नुषा नित्यं माण्डव्यै च नमो नमः ॥

ॐ श्रीमाण्डवी देव्यै नमः । मन्त्र पढकर श्रीमाण्डवीजी का पूजन करे । उसके बाद--

ॐ कुशध्वज सुता देवि ! शत्रुघ्न प्राण वल्लभा ।
श्रुतिकीर्ते नमस्तुभ्यं प्रसन्ना शान्तिदा भव ॥

ॐ श्री श्रुति कीर्ति देव्यै नमः । मन्त्र पढकर श्री श्रुतिकीर्ति जी का पूजन करे । तत्पश्चात्--

ॐ सुदर्शने नमस्तुभ्यं लोकानां सुष्ठुदर्शने ।
देवि त्वं सूतिकागारे प्रसन्ना पूजिता भव ॥

ॐ श्रीसुदर्शना देव्यै नमः । मन्त्र पढकर श्री श्रुतिकीर्ति की अम्बा श्रीसुदर्शनाजी का पूजन करे ! तब आरती करे--

ॐ मङ्गलार्थं महादेवि ! नीराजनमिदं शिवे ।
संगृहाण कृपापूर्णे कृपादृष्ट्याऽवलोकय ॥

यह मन्त्र पढकर आरती उतारे । तत्पश्चात्--

"दुरन्त संसार समुद्रमग्नं सीते ! शरण्यां शरणागतं त्वाम् ।
दत्त्वाऽभयं ह्याशुकृतं मयैतदूनं ततो देवि ! मयि प्रसीद ॥

इस प्रकार प्रार्थना करके साष्टाङ्ग दण्डवत् प्रणाम कर पुनः--

ॐ ताम्म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं प्रभूति गावो दास्योऽश्वान् विन्देयं पुरुषानहम् ॥

"मन्त्र पढ़कर श्रीसीतायै नमः पुष्पाञ्जलि समर्पयामि" मन्त्र पढकर पुष्पाञ्जलि समर्पण करे । तब बाह्यमण्डप में आकर इस प्रकार स्तुति प्रार्थना करे—

श्रीरामवल्लभा-स्तोत्रम्

नीलनीरजदलायतेक्षणां, कोशलेश भुजसावलम्बिनीम् ।
सानुराग हरिनेत्रवीक्षतीं, भावये मनसि रामवल्लभाम् ॥१॥
मन्थराल सुगति कृशाङ्गिकामङ्ग, कान्ति परिभूत चन्द्रिकाम् ।
ताडकारिसहप्रेमनिर्भरां, भावये मनसि रामवल्लभाम् ॥२॥

नील कमल दल के समान विशाल सुन्दर नयनों वाली, श्रीकोशलेन्द्र राजकुमार की भुजाओं द्वारा सप्रेम आलिङ्गित, अत्यन्त अनुराग से श्रीरामचन्द्रजी को ही देखने में अनुरक्त, श्रीरामवल्लभाजू का मैं मन में ध्यान करता हूँ ॥१॥ मन्द मधुर गज की गति से चलने वाली पतली चमकती विजली सी काया की सुन्दर कान्ति से चन्द्रमा का चन्द्रिका को भी पराजित करने वाली ताडका को मारने वाले श्रीरामभद्रजू के प्रेम में निर्भरा श्रीरामवल्लभाजू का मैं मन से भावना करता हूँ ॥२॥

कुन्तलालककपोलमाननं, राहुवक्त्रग सुधांशु सुद्युतिम् ।
वाससा पिदधतीं ह्रियाकुलां, भावयेमनसि रामवल्लभाम्॥३॥
कायवाङ्मनसि यां पतिं, व्यंधास्स्वप्न जागृतिषु राघवेश्वरः ।
शिवविरञ्चि हरिरंघ्रि वन्दितां भावयेमनसि रामवल्लभाम् ॥४॥

अमृतरस पानलोलुप राहु के बीच में पडे हुए चन्द्रमा की भांति काले-काले घुंघराले केशकलाप से जिनके कपोल अच्छादित है (ढंके हुए हैं) तथा लाज से परवश अपने वस्त्र से मुख को बारंबार छिपा रहीं हैं ऐसी श्रीरामवल्लभाजू की मैं मन में भावना करता हूं ॥३॥ तन-मन-वचन से श्रीराघवेन्द्र प्रभु को ही जाग्रत में तथा स्वप्न में भी उन्हीं को चाहती है ऐसी शिव-ब्रह्मा-विष्णु आदि देवताओं द्वारा वन्दनीय श्रीरामवल्लभाजू का मैं मन में ध्यान करता हूं ॥४॥

भक्त्यैगम्यां प्रकृतेः परां च, चित्ते भृशं लोकनमस्कृताञ्च ।
भू-वायु-वह्नी वननाकसंस्थां,सम्भावये सम्प्रति रामवल्लभाम् ।५।
इन्द्र-रुद्र-धनदाम्बुपालकैः, सिद्धसाध्य गणा संयुतैर्दिवि ।
पुष्पवर्षमनुकीर्त्तितां स्तुतां, भावये मनसि रामवल्लभाम् ॥६॥

जो केवल प्रेमाभक्ति से ही प्राप्त होतीं है । जो प्रकृति से परे हैं । सर्वलोक नमस्कृत हैं । जो पृथिवी-जल-अग्नि-वायु-आकाश चित्त में तथा स्वर्ग में सर्वत्र विराजती हैं ऐसी श्रीराम-वल्लभाजू का मैं इस समय ध्यान करता हूं ॥५॥ इन्द्र-चन्द्र-रुद्र धनाध्यक्ष कुबेर-सिद्ध तथा साध्यगणों द्वारा स्वर्ग में पुष्पों की वृष्टि से जिनका निरन्तर कीर्तन गान होता रहता है ऐसी श्रीरामवल्लभाजू का मैं ध्यान करता हूं ॥६॥

ध्यायमानममरैः स्वरूपां, वाम् धामतनुनिर्जितहेमाम् ।
फुल्लनीरज निभां वराननां, भावये मनसि रामवल्लभाम् ॥७॥
संचयैर्दिविषदां विमानगैः, विस्मयाकुलमनोभिरीक्षिताम् ।

तेजसां विदधतीं सदा दिशं भावये मनसि रामवल्लभाम् ॥८॥

जो खिले हुए नवीन कमल के समान मुखवाली है जो देवताओं द्वारा अपने हृदय में सदैव ध्यान करने योग्य स्वरूप वाली हैं, जो अपनी देह की कान्ति से सुवर्ण को भी जीतनेवाली हैं। ऐसी श्रीरामवल्लभाजू का मैं मन में ध्यान करता हूँ ॥७॥ देवताओं के समूह विमानों पर बैठकर बड़ी उत्सुकता से आश्चर्य चकित होकर जिनका दर्शन करते हैं, तथा दशो दिशाओं को तेज से सुप्रकाशित कर रही हैं ऐसी श्रीरामवल्लभाजू की मैं भावना करता हूँ ॥८॥

एतदष्टकमनिष्ट हानिकृद्यः पठेदथ शृणोत्यहर्निशम् ।
अन्तराय रहितां श्रीमैथिली तस्यभूतिमतुलां प्रयच्छति ॥९॥

सभी प्रकार के अनिष्टों का निकन्दन करने वाला यह श्रीरामवल्लभाष्टक यदि कोई सप्रेम पढे अथवा श्रवण करे तो श्रीकिशोरीजी की अन्तरायरहित निरन्तर कृपा होती है तथा उसको अतुलनीय भूमि तथा द्रव्य श्रीकिशोरीजी प्रदान करती हैं ॥९॥

इस प्रकार इस श्रीरामवल्लभाष्टक स्तोत्र का पाठ करते हुए परममङ्गलमय श्रीकिशोरीजू के युगल श्रीचरणारविन्दों का स्पर्श करके हाथ जोडकर प्रार्थना करे। हे ब्रह्मर्षे ! प्रेम पूर्वक पराभक्ति से मकडे के जाले के समान कोमलवाणी से विनयपूर्वक सरस वचनों से स्तुति प्रार्थना करके पुष्पाञ्जलि समर्पण कर स्तुति करे, पुनः पुनः स्तुति-प्रार्थना-सङ्गीत-बाजा प्रेम नृत्य आनन्द पूर्वक

करते हुए सारी रात जागरण करे । इसी प्रकार श्रीजानकी नवमी की रात्रि महान् आनन्दोत्सव में व्यतीत करे । मध्याह्न काल में जन्मोत्सव की आरती के पश्चात् सारी रात उन्हीं के भजन में बितावे और श्रीजानकी नवमी की व्रतकथा का माहात्म्य भी श्रवण करे ।

॥ इति मध्याह्न कृत्यम् ॥

❀ अथ श्री जानकीनवमीव्रत माहात्यम् ❀

ततो माहात्म्य श्रवणं कर्तव्यं विधि कोविदैः ।
अन्यथा फलहानि स्याद् भस्मन्येवाहुतिर्यथा ॥१॥

पूजा करने के पश्चात् सायंकाल में श्रीजानकीनवमी के व्रत का माहात्म्य विधान जानने वाले उत्तम व्रती को श्रवण करना चाहिये । अन्यथा भस्म में हवन करने की भांति फल नष्ट हो जाता है अतः कथा तो अवश्य श्रवण करे ॥१॥

श्रीसूत-उवाच

एकदा जनको राजा मिथिलामावसन् पुरीम् ।
यज्ञार्थं मानसं चक्रे समाहूय च ब्राह्मणान् ॥२॥
पार्थिवांश्च समाहूय तथा जानपदान् जनान् ।
ऋषीन् सर्वान्समाहूय संभारान् स्थाप्य भूरिशः ॥३॥
लाङ्गलञ्च विधायाथ शातकौंभमयं शुभम् ।
शतानन्दं पुरस्कृत्य समारेभे क्रतूत्तमम् ॥४॥
मासोत्तमे महापुण्ये वैशाखे माधवप्रिये ।
कुजवारे शुक्लपक्षे नवमीपुण्यसंयुता ॥५॥

पृथिव्याः पूजनं कृत्वा जनकस्तु नरेश्वरः ।
हलेन कर्षणं चक्रे सर्वेषां पश्यतां सताम् ॥६॥
लाङ्गलस्यमुखाग्रात्तु महालक्ष्म्यादिवन्दिता ।
भित्त्वाक्षितितलं सद्यः सीताकन्या विनिर्गता ॥७।

श्रीसूत पुराणीजी बोले-हे शौनकादिक महात्माओ ! एकबार श्रीमिथिलाधाम में निवास करते हुए श्रीजनकजी महाराज के मन में श्रीजानकी महायज्ञ करने की इच्छा हुई, अतएव उन्होंने ब्राह्मणों को-राजाओं को-प्रतिष्ठित प्रजाजनों को, तथा सन्त-महात्मा ऋषियों को आमन्त्रित किये। बहुत यज्ञसामग्री एकत्रित की, स्वर्ण का रत्नजटित शुभ हल तैयार करवाया, श्रीशतानन्दजी को आचार्य बनाकर यह उत्तम श्रीजानकी महायज्ञ प्रारम्भ किया। महान् पुण्य प्रद प्रभु का प्यारा सभी मासो में श्रेष्ठ वैशाख मास शुक्लपक्ष नवमी तिथि मङ्गलवार के दिन पुष्यनक्षत्र के योग में राजेन्द्र श्रीजनकजी महाराज विधिवत् पृथिवी का पूजन करके हल से यज्ञ भूमि को जोतने लगे। उस समय सभी सत्पुरुषों के देखते हुए हल के नोक से श्री सीता मही के पावन क्षेत्र में पृथिवी का भेदन कर महालक्ष्मी आदि प्रमुख देवियों द्वारा वन्दनीय श्रीसीताजी कन्या रूप से प्रकट हुईं। (श्लोक २ से ७ पर्यन्त)

जज्ञे यज्ञेशयज्ञेऽद्भुतदिनमकरद्योतमुद्योत गेहे-
जज्ञे सिंहासनं सन्मणिवर रचितं हैमिकं मैथिलस्य ।
सार्द्धं द्विःफ्रस्फुटिताष्टच्छदजलज मलं शौरिणोष्ठौ करस्य
सख्यौ गौरीमुखास्तेऽथ शुभचरिता मध्यगा जानकीति ॥८॥

गौरी-श्री-भू तथा लीला मेधा-सावित्री जया ।
विजयाष्ट सखी मुख्या पद्मपत्रेषु संस्थिताः ॥९॥
ततो दुन्दुभयो नेदुः खात्पेतुः पुष्पवृष्टयः ।
गन्धर्वाश्च जगुः सर्वे ननृतुश्चाप्सरो गणाः ॥१०॥
संबोध्य जनकं वाणी देवैः प्रोक्ता ब्रवीदिदम् ।
पाल्यतां च त्वया राजन् ! कन्येयं कन्यका यथा ॥११॥
भविष्यति परं श्रेयो ह्यनया कन्यया तव ।
मुमोद जनको राजा श्रुत्वा वाक्यं गिरेरितम् ॥१२॥
अन्तर्भूता तदा सीता सर्वलोकस्य पश्यतः ।
तदाश्चर्यमभूद्राजाकिमेतदिति चिन्तयत ॥१३॥
नारदस्तु तदागत्य शिक्षयामास भूपतिम् ।
तदा तु जनको राजा कृत्वा निश्चय हर्षितः ॥१४॥
पत्न्यै समर्पयामास यज्ञवृत्तान्त मद्भुतम् ।
तस्मिन्काले सुता जाता मेघविद्युल्लतोपमा ॥१५॥
सुनेत्रा रक्षिता सीता ववृधे पितृवेश्मनि ।
शुक्लपक्षे यथा नित्यं द्विजराजस्य कौमुदी ॥१६॥

उस यज्ञेश के यज्ञ में दशहजार सूर्यों के समान गृह को प्रकाशित करने वाली मणिरत्नों से जटित स्वर्णरचित दिव्यसिंहासन पर विराजमान श्रीमिथिला नरेश के द्वारा जोती हुई भूमि में अष्टदल वाले कमल पर विराजी हुई श्रीगौरी आदि सखियों के मध्य में श्रीजानकीजी के नाम से सुविख्यात शुभ चरित्र वाली श्रीसीताजी प्रकट हुई ॥८॥ गौरी-भू श्रीलीला-मेधा सावित्री

जया-विजया ये आठ सखियां कमल के अष्टदलों पर विराजी हैं। आकाश में दुन्दुभी बजने लगी, पुष्पों की वृष्टि आकाश से होने लगी। गन्धर्वसब गाने लगे अप्सरायें नाचने लगीं। उस समय देवताओं ने जनकजी को सम्बोधित कर मधुरवाणी से कहा कि "हे राजन्! आप इस कन्या को अपनी कन्या के समान पालन करिये। इस कन्या की सेवा करने से आपका परमकल्याण होगा," देवताओं की ऐसी दिव्यवाणी को सुनकर राजा जनकजी बहुत प्रमुदित हुए। इतने में ही सबके देखते देखते श्रीसीताजी अन्तर्ध्यान हो गई। राजा को यह अधिक आश्चर्यप्रद हुआ कि यह सब क्या हुआ? ऐसा मन में सोच रहे थे उसी समय श्रीनारदजी आ गये, तथा श्रीजनकराज को सम्पूर्ण कथा सुनायी, तब राजा श्रीजनकजी ने "यह जगदम्बा की महान् कृपा है" ऐसा निश्चित विचार कर परमप्रसन्न हुए। अपनी महारानी को बुलाकर यज्ञ का यह अद्भुतवृत्तान्त कह सुनाया, उसी समय मेघ में बिजली चमकती हो ऐसी सुप्रकाशित एक कन्या प्रकट हुई, श्रीसुनयना अम्बा ने उसका वात्सल्य भाव से संरक्षण किया। श्रीसीताजी अपने पिता के घर मेंशुक्ल पक्ष में कैसे नित्य ही चन्द्रमा की कलायें बढती हैं कैसे बढने लगीं। (श्लोक ८ से १६)

कनिष्ठा कन्यका तस्या उर्मिला नाम नामतः।
कुशध्वजस्य या पत्नी सापि कन्यामजीजनत् ॥१७॥
श्रुतिकीर्तिं माण्डवीं च ध्यानात्पाप प्रणाशिनी।
ब्रह्म विष्णु महेशश्च रमोमा च सरस्वती ॥१८॥

सुभगा चारुशीलाख्या सीतायाः सा सखीमता ।
सिद्धयोऽष्टादश प्रोक्ता निधयश्च नव स्मृताः ॥१९॥
सखीभावं प्रयाताश्च जानक्या जनकालये ।
यदा प्रभृति सीता तु याता जनकवेश्मनि ।
लोकपालनिभास्सर्वे धन धान्य चयैर्बभुः ॥२०॥

श्रीजनकजी को श्रीसुनयनारानी से एक छोटी दूसरी कन्या हुई जिसका नाम श्रीउर्मिलाजी हुआ । तथा उनके छोटे भाई श्रीकुशध्वज महाराज को महारानी श्रीसुदर्शनाजी से श्रीमाण्डवी तथा श्रीश्रुतिकीर्तिजी नाम से दो कन्यायें हुई, जिनका ध्यान करने से ही सारे पाप नष्ट कर देती हैं । ब्रह्मा-विष्णु-शंकर उमा-रमा-सरस्वती-सुभगा (श्रीचन्द्रकला) चारुशीला ये सब श्री सीताजी की सखियां होकर सेवा में रहीं । अट्ठारह सिद्धियां तथा नवनिधियां भी श्रीजानकीजी की सखी भावना से जनकजी के राजमहल में निवास करने लगीं । जिस दिन से श्रीजनक राजमहल में श्रीसीताजी पधारीं उसी दिन से सब जनकपुर धाम निवासी धनधान्य सुख सम्पत्ति सम्पन्न लोकपालों के सदृश हो गये । (श्लोक १७ से २० तक)

श्री शौनक-उवाच—

व्रतान्यन्यानि सर्वाणि श्रुतानि त्वन्मुखाम्बुजात् ।
अधुना श्रोतुमिच्छामि व्रतानां व्रतमुत्तमम् ॥२१॥
येन चीर्णानि सर्वाणि पापानि च महान्त्यपि ।
भवन्ति भस्म सा देव तूलराशिरिवाग्निना ॥२२॥

अल्पायास महापुण्यं रघुनन्दन तुष्टिदम् ।
नाना मनोरथकरं व्रतं ब्रूहि प्रसादतः ॥२३॥

हे गुरुदेव ! आपके श्रीमुख कमल से अन्यान्य तो अनेकों व्रतों का वर्णन हम लोगों ने श्रवण किया है, परन्तु आज तो सभी व्रतों में उत्तम व्रत जो हो, जिसके करने से महान् पापों के गंज भी रुई को अग्नि जलावे ऐसे जल जायं प्रयास अल्प हो फल महान् हो, श्रीरघुनाथजी को प्रसन्न करने वाला हो, नाना मनोरथ पूर्ण कर देता हो ऐसा सुन्दर व्रत विधान कृपा करके कहिये (श्लोक २१ से २३ पर्यन्त)

श्रीसूत-उवाच—

उचितोऽयं तव प्रश्नो निपुणा च मतिर्यतः ।
ईदृशो तु मुने त्वत्तो धन्यो नान्यो मतो मम ॥२४॥
इदमेव पुरा ब्रह्मन् ! मार्कण्डेयो मुनीश्वरः ।
मुनये गौतमायोचे तच्छृणुष्वैक चेतसा ॥२५॥
एकदा समये प्रातरुत्थितो गौतमोमुनिः ।
चकितश्चिन्तयाविष्टो ययौ देवं महेश्वरम् ॥२६॥
कृताञ्जलिपुटोभूत्वा प्रणम्य शिरसादरात् ।
जगाद मधुरां वाणीं स्मितपूर्वां द्विजोत्तम ॥२७॥

श्रीसूत पुराणीजी बोले—हे शौनक ! आपका यह प्रश्न उत्तम है आपकी बुद्धि अतिश्रेष्ठ है इसलिये आपके जैसा धन्यात्मा पुरुष दूसरा कोई नहीं है यह मेरा विचार है । इसी प्रकार का उपदेश मुनीश्वर श्रीमार्कण्डेयजी ने गौतमजी को दिया था वह कथानक

आप एकाग्रचित्त से सावधान होकर श्रवण करें। एक दिन गौतममुनि प्रातःकाल बड़ी चिन्ता मे आश्चर्यचकित हुए श्रीमहादेवजी के पास गये। उनके श्रीचरणों मे हाथ जोड़कर साष्टाङ्ग प्रणाम कर हेद्विजोत्तम ! गौतमजी ने हंसते हुए बड़ी मधुरवाणी में कहा (श्लोक २४ से २७)

श्रीगौतम-उवाच—

त्रिकालज्ञोऽसि देवेश भक्तानुग्रहकारक।
वन्द्योऽसि सर्वलोकानां ध्येयोऽपि च भवानिह ॥२८॥
त्रिषु लोकेषु नान्योऽस्ति त्वतः श्रेष्ठो महेश्वर।
भवन्तं प्रष्टुमिच्छामि त्वन्तः किञ्चित्कुतूहलम् ॥२९॥
अदर्शयन्मया रात्रौ स्वप्नावस्थित चेतसः।
वक्ष्यामि तदहं देव ! यद्याज्ञापयसीश्वरः ॥३०॥
इति गौतम वाक्यानि श्रुत्वा देवो महेश्वरः।
अनुजग्राह तं वाचा मुनिं संयोज्य चक्षुषा ॥३१॥

श्रीगौतममुनि बोले—हे देवदेव महादेव ! आप भक्तों पर अनुग्रह करने वाले सर्वलोकवन्दनीय तथा ध्येय हैं, त्रिकाल द्रष्टा हैं, इस त्रिभुवन में आपसे श्रेष्ठ अन्य कोई नहीं है, हे महेश्वर ! मेरे अन्तःकरण में कुछ कौतूहल है, उसका समाधान आपसे पूछना चाहता हूँ। मैंने आज रात्री में एक विचित्र स्वप्न देखा है यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं आपसे निवेदन करूं। श्रीगौतमजी के ऐसे वचनों को सुनकर देवाधिदेव महादेवजी ने नेत्र के संकेत से इस बात को स्वीकार किया (श्लोक २८ से ३१)

श्रीगौतम-उवाच –

अष्टम्यां निशिदेवेश ! मुहूर्ते ब्रह्मसंज्ञके ।
कासारः सारसाश्चैव चलज्जलतरङ्गितः ॥३२॥
गुञ्जद्भ्रमर वाचालः फुल्लत्कमल मण्डितः ।
कुमुदावलि भूषाढ्यो हंसचक्रावलीवृतः ॥३३॥
दृष्टोमयेदृशो देव ! स्नातोऽहं तस्यवारिणि ।
आगत्य रम्यवेलायां तत्रैव चोपकानने ॥३४॥
रसालविलसत्ताले विशाले चम्पकाकुले ।
मालती केतकी पुष्प फल भूषा विभूषिते ॥३५॥

हे देवेश ! अष्टमी की रात्रि में सोकर प्रातःकाल ब्राह्ममुहूर्त में उठने के समय में मैंने स्वप्न में एक विचित्र सरोवर देखा, जिसमें सारस शोभा दे रहे थे, तथा स्वच्छ जल लहरा रहा था, वाचाल भौंरे गुञ्जार कर रहे थे, प्रफुल्लित कमल के पुष्प शोभा बढ़ा रहे थे, कुमुद की पंक्तियों से विभूषित, हंस-चक्रवाक से अलङ्कृत ऐसा सुन्दर तालाब मैंने देखा, उसके निर्मलजल में मैंने स्नान किया, उस रमणीय वेला में विशाल चम्पा-आम-ताल-मालती-केतकी आदि वृक्षों के फल पुष्पों से सजेसजाये उस उपवन में आकर मैं बैठ गया (श्लोक ३२ से ३५ तक)

लसन्तीं काञ्चनीं भूमिं तत्रापश्यं महेश्वर !
कोटिचन्द्र निभस्तस्यां मणिभिर्विलसत्प्रभाम् ॥३६॥
दिव्य सिंहासने रम्ये किशोरी काप्यनुत्तमा ।
लसत्कनक चार्वङ्गी विशाल कमलेक्षणा ॥३७॥

विद्योतमाना सर्वाङ्गी दिव्याभरणमण्डिता ।
सर्वसेव्या परास्तुया द्विभुजा श्रीरूपासिता ॥३८॥
तारापति समाकारातपत्रेण विराजिता ।
तत्पार्श्वे मण्डलाकारा अष्टनार्योभि संस्थिताः ॥३९॥
सिंहासन गतां देवीं चामर व्यजनादिभिः ।
सेवयन्त्यस्ततो दृष्टाः षोडशान्यास्त्वनन्तरम् ॥४०॥
मण्डला कृतयस्ताश्चाप्यमितो रुचिराङ्गना ।
वीणा प्रक्काणनिपुणा नृत्यन्त्यो गायनेरताः ॥४१॥
तासामनन्तरं तद्वच्छतशो ललनोत्तमाः ।
सम्पुटाञ्जलयः सर्वास्तुवन्त्यो मध्यगा वराम् ॥४२॥

हे श्रीमहेश्वरजी ! मैंने वहाँ स्वर्णमयी दिव्यभूमि का दर्शन किया चन्द्रमा के समान प्रकाशित करोड़ों मणियों को प्रभाव से वह भूमि चमक रही थी। उस पर एक परम सुन्दर दिव्य सिंहासन पर कोई एक अतिविलक्षण देवी किशोरीरूप में विराजमान है। अत्यन्त रुचिर कनकवर्णगौर सुन्दर अङ्गवाली, विशाल कमल दल के समान नेत्रवाली, सर्वाङ्ग जिनका दिव्यालङ्कार आभूषणों से विभूषित है, सभी उनकी सेवा कर रहीं हैं। सबसे परात्परा, द्विभुजा श्रीजी भी उनकी उपासना कर रही हैं, चन्द्रमा के समान स्वच्छ शुभ्रछत्र से सुशोभित विराज रही हैं। उनके पास में आठ नारियां बड़ी सुन्दर चारों ओर मण्डलाकार शोभा दे रही हैं, जो सिंहासन पर बैठीं हुई देवी की चंवर–छत्र–व्यजनादिक सेवा परायण हैं उनके पास द्वितीय मण्डल में सोलह सखियां हैं वे भी सब उनकी

सेवा में परायण हैं बड़ी सुन्दर मण्डलाकार गान-बखान-नृत्य-राग में परायण सेवा कर रही हैं उनके पश्चात् बाह्य मण्डल में सैकड़ों अति सुन्दरी उत्तमोत्तम ललनाऐं हाथ जोडे मध्य में विराजमान परमश्रेष्ठ देवी की स्तुति कर रहीं हैं (श्लोक ३५ से ४२ पर्यन्त)

इत्थं दृष्ट्वा महाश्चर्यं चकितोऽहं शनैः शनैः ।
कर सम्पुटितं कृत्वा मध्यसिंहासनेस्थिताम् ॥४३॥
तिष्ठन्निर्वचनीयाग्रे दण्डवत्प्रणिपत्य च ।
स्तोतुं नाशक्नुवन् किञ्चित्तेजः पुञ्ज पराहतः ॥४४॥
एकाग्रचित्तो दृष्टोऽहमध्यायं परमेश्वरीम् ।
सिंहासनसमीपेन्यां ताम्बूलं ददतीं मुखे ॥४५॥
सिंहासनगतायास्तु मुख्यदेव्याः स्वपाणिना ।
स्पर्शन् सा च मां दृष्ट्वा स्वामिनी स्वामिनी वदत ॥४६॥
कर सम्पुटितं देवि ! कृत्वाग्रे द्विजसत्तमः ।
कश्चित्तिष्ठति वै भक्त्या ह्यनुगृह्णातु संसति ॥४७॥
इति तस्या वचः श्रुत्वा मुख्यदेवी जगाद माम् ।
भक्तिमानसि भो वत्स ! व्रतं कुरु मम द्विज ! ॥४८॥
गच्छ स्वमाश्रमं ब्रह्मन् ! परेद्युर्व्रतमाचर ।
इति स्वप्नमहं दृष्ट्वा सम्भ्रमादुत्थितस्तदा ॥४९॥

इस प्रकार का महान् आश्चर्य देखकर मैं तो चकित ही रह गया । धीरे-धीरे उठकर हाथ जोडकर मध्य सिंहासन पर विराजमान , अनिवर्चनीय महिमामयी देवी को साष्टाङ्ग प्रणाम

करके कुछ स्तुति करना चाहता था, परन्तु उनके अत्यन्त तेज से पराहत हो जाने से मैं कुछ भी बोल न सका। एकाग्रचित्त से उस परमेश्वरी का अत्यन्त हर्ष से ध्यान करने लगा। उस समय क्या देखता हूं कि सिंहासन पर विराजमान मुख्य देवी के मुख में पान देती हुई एक अन्य देवी उनका अपने हाथ से स्पर्श हुई बोलीं-स्वामिनी जू स्वामिनी जू! "हाथ जोड़कर कोई एक उत्तम ब्रह्मण भक्ति पूर्वक आपके सम्मुख खडे हैं, हे देवि! आप उन पर अनुग्रह करें।" इस प्रकार उनका वचन सुनकर मुख्य देवी ने मुझसे कहा-हे वत्स! तुम बडे भक्तिमान् हो हे द्विज! तुम मेरा ब्रत करो। जाओ ब्रह्मन्! अपने आश्रम में जाकर परसों हमारे ब्रत का अनुष्ठान करना। ऐसा स्वप्न देखते ही एकाएक मैं जग गया उठकर खडा हो गया (श्लोक ४३ से ४९)

ततः प्रभृति चित्तेऽहं चिन्तयामि मुहुर्मुहुः।
किं स्थलं कः स कासारः कः समाजोद्भुतस्तथा ॥५०॥
का देवी सा यया तत्र शिक्षितो वचनैर्निजैः।
व्रतं किमुपदिष्टं मे विधानं तस्य कीदृशम् ॥५१॥
एतत्समस्त सन्देहपङ्केन मलिनं मनः।
कृपया शोधयस्वाशु स्ववाक्यामृत वीचिभिः ॥५२॥
भवतः को महानस्ति समस्त भुवनेष्वपि।

श्रीसूत-उवाच-

इतितस्यवाचः श्रुत्वा गौतमस्य मुनेः प्रभुः ॥५३॥
आनन्दाश्रु प्लुतो देवो महेशः पुलकाञ्चितः।

जगाद मधुरां वाणीमादराद्भक्तवत्सलः ॥५४॥

हे प्रभो ! उसी समय से मैं अपने चित्त में वारंवार चिन्तवन करता हूँ कि—वह स्थल कौन सा है ? उस सरोवर का क्या नाम है ? वह अद्भुत समाज कौन सा था ? उस देवी का क्या नाम है जिन्होंने अपने मधुर बचनों से मुझे व्रतोपदेश की शिक्षा प्रदान की ? उस व्रत का क्या नाम है ? उस व्रत को करने का विधान कैसा है ? इन्हीं सब सन्देहों के कोचड़ में मैं फंसा हुआ हूं आप कृपा करके अपने वाक्य रूपी अमृतमयी धारा प्रवाह की लहरियों से उस शंका पङ्क को शीघ्र ही धोकर स्वच्छ कर दें, आपसे महान् श्रेष्ठ समस्त भुवनों में और कौन है ? जो मेरा समाधान कर सके ? श्रीसूतजी बोले—श्रीगौतममुनि के ऐसे वचनों को श्रवण कर देवदेव महादेव भोलाशङ्कर प्रभु आनन्द में भर गये, नेत्रों से प्रेमाश्रुओं का प्रवाह चलने लगा, शरीर रोमाञ्चित पुलकायमान हो गया, भक्त वत्सल भगवान् बड़ी मधुरवाणो से बोले (श्लोक ५० से ५४)

श्रीशंकर-उवाच—

धन्यस्त्वमेव सर्वेषां मुनीनामृषि गौतम ।
अनुग्रहो महान् यस्य तव वत्साभवत्किल ॥५५॥
तच्छृणुष्वनिजं स्वप्नं सर्वं वच्याम्यशेषतः ।
यदपश्यः स्थलं वत्स ! मिथिलाक्षेत्रमेव तत् ॥५६॥
यत्तत्रोपवनं दृष्टं जगदानन्दनाभिधम् ।
अवेहि तद्वनं साधो ! कासारं कमलाकरम् ॥५७॥

सिंहासनगतां देवीं द्विभुजां रामवल्लभाम् ।
धृतातपत्रां यांदेवीमावृतां प्रमदाजनैः ॥५८॥
त्वमपश्यःस्तुतां सीतां मदुपास्यां सदामुने !
अवेहि तस्याः निकटे ताम्बूलं ददतीं मुखे ॥५९॥
सेवन्तीदेवतामुख्यां तव विज्ञप्तिकारिणीम् ।
सा दृष्टा भवता मुख्या सीतायाः सुभगा सखी ॥६०॥
यामाहुर्मोहिनींमायां जनौघानां विपश्चितः ।
अष्टौ वहिस्तु यां दृष्टा शृणुता अप्यनुक्रमात ॥६१॥

श्री शङ्करजी बोले—हे गौतमऋषि ! सभी मुनियों में तुम ही परम धन्य हैं जो तुम्हारे ऊपर उनका ऐसा महान् अनुग्रह हुआ है । हे वत्स ! अब अपने स्वप्न का स्वरूप तुम श्रवण करो । मैं सम्पूर्ण उसका परिचय कराता हूं । तुमने सुन्दर स्थल देखा वह "श्रीमिथिला क्षेत्र" ही है । वहां जो वन देखा वह जगत् को महान् आनन्द प्रदान करने वाला जगदानन्दक "श्री-कञ्चन वन" है । तथा जो सरोवर देखा वह "श्रीकमलाकर" (विहार कुण्ड) है । मध्य सिंहासन पर प्रमदाजनों से घिरी हुई थीं तथा जिनके शिर पर छत्र सुशोभित हो रहा था, जिनकी सभी स्तुति कर रहीं थी वह द्विभुजावाली देवी श्रीरामवल्लभा सीताजी हैं । हे मुने ! उनके पास में उनको पान पवाती हुई आपकी ओर से विनती करने वाली जिस देवी को आपने देखा था वह श्रीसीताजी की सखियों में मुख्य सुभगा सखी श्रीचन्द्रकला सखा हैं । जिनको विद्वान् पुरुष भुवन मोहिनी माया देवी कहते हैं । तथा

बाहर मण्डल में जो आठ सखियां देखीं उनके क्रमशः ये नाम हैं (श्लोक ५५ से ६१ तक)

जया च विजया चैव गीः पुष्टिस्तुष्टिरेव च।
वीणा कान्ति स्तथाकीर्तिस्तासा मित्यभिधा मताः ॥६२॥
षोडशान्यास्तुतत्पार्श्वे मण्डलाकृतयोङ्गनाः।
गीत वादित्रकारिण्यस्तासामप्यभिधा शृणु ॥६३॥
अणिमा-महिमा चान्या गरिमा लघिमा परा।
प्राप्तिः प्राकाश्यता चार्योईशिता वशिता तथा ॥६४॥
शरण्या सुमना चापि सुरूपा मालती तथा।
नलिनी-नन्दिनी चापि स्रग्विणी काञ्चनी मता ॥६५॥
अवेहि षोडशैवासूरन्याश्चापि वदाम्यहम्।
वैदिक्यस्तु ऋचोविद्धि ताः सर्वा मुनिसत्तम ॥६६॥

जया-विजया-वाणी-पुष्टि-तुष्टि-वीणा-कान्ति तथा कीर्ति ये उनके आठ नाम हैं। जो दूसरी षोडश उनके पास मण्डलाकार गाती बजाती देवियों को देखा था उनके नाम भी सुनो, अणिमा-महिमा-गरिमा-लघिमा-प्राप्ति-प्राकाश्य-ईशिता वशिता-शरण्या-सुमना-सुरूपा-मालती-नलिनी-नन्दिनी स्रग्विणी तथा काञ्चनी ये क्रमशः उनके नाम हैं। और भी जो स्तुति करतीं हुई सोलह ललनाओं को देखा था वे वेद की १६ ऋचाये जो श्रीसूक्त में पठित हैं वही हैं। (श्लोक ६२ से ६६)

महाननुग्रहो जातो सीतादेव्यास्त्वयि द्विज!
सा देवी कृपया तुभ्यं स्वीयं रूपमदर्शयत् ॥६७॥

तस्मात्त्वं पुण्यवान् धन्यो नानाजन्मार्जिताद्धितान् ।
उत्कटं यत्तपस्तप्तं पुरातत्फलमस्त्ययद: ॥६८॥
ददौ यद्दर्शनं तुभ्यं व्रतं चोपदिदेश सा ।
कुरुष्व सर्वदा वत्स ! व्रतमेतन्महाफलम् ॥६९॥
तेन चीर्णेन सकलं फलमाप्स्यसि वै ध्रुवम् ।
परेद्युर्गे कुरुष्वेतज्जानकी जन्मनो व्रतम् ॥७०॥
सन्तुष्टा जानकी येन भविष्यति न संशयः ।
एतद् व्रत समाप्यस्ति कर्तव्यं श्वो द्विजोत्तम ॥७१॥
माहात्म्यं तस्यगदितं नास्ति मे निश्चलं मनः ।
अहं तद्रसलीनोऽस्मि शक्तस्तद् गदितुं नहि ॥७२॥
तस्मादेकं वदामि त्वा मार्कण्डेयाश्रमेऽधुना ।
गत्वा मुनीन्द्रं सकलं मार्कण्डेयानु पृच्छताम् ॥७३॥
सर्वं न्यवेदिष्यं तस्मैव्रतमाहात्म्य मुत्तमम् ।
यद्विधानं फलं तस्य स मुनिस्त्वां वदिष्यति ॥७४॥
मार्कण्डेयोपदिष्टेन विधिना चर तद् व्रतम् ।
यथाशक्त्यापि कुर्वाणो व्रतस्योत्सवमादरात् ॥७५॥
लप्स्यसे सकलान्कामान्नात्र कार्या विचारणा ।

हे द्विज ! श्रीसीतादेवी का तुम्हारे पर महान् अनुग्रह हुआ है, जो उन महादेवी ने कृपा कर तुमको स्वप्न में अपना दर्शन दिया है । अतएव तुम पुण्यवान् हो, धन्य हो अनेको जन्मों के किये हुए प्रचण्ड तप का पुण्यफल तुमको प्राप्त हुआ है जो तुमने श्रीकिशोरीजी का दिव्य दर्शन तथा उनके श्रीमुख का दिव्य

उपदेश प्राप्त किया है इसलिये हे वत्स तुम प्रतिवर्ष श्रीजानकी नवमी का व्रत किया करो। उससे तुम सभी पुण्यों का फल अवश्य ही शीघ्र प्राप्त करोगे। परसों श्रीजानकीजी के जन्म का व्रत है उसको तुम अवश्य करो। उससे श्रीजानकीजी अवश्य प्रसन्न होंगी इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। हे द्विजोत्तम! यह व्रत हमको भी कल से प्रारंभ करना है। मेरा मन एकाग्र नहीं है। उनके प्रेमरस में तल्लीन है इसलिये अभी मैं उसका माहात्म्य वर्णन करने में असक्त हूं। हाँ, तुमको अभी एक उपाय बताता हूँ तुम अभी मार्कण्डेय मुनि के आश्रम में जाओ तथा उनको सम्पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाओ, तब तुम्हारे प्रेम से पूछने पर मुनीश्वर मार्कण्डेय सर्वोत्तम व्रत का माहात्म्य तथा जो कुछ विधि विधान है सब बतावेंगे। उनके बताये हुए विधान से व्रत करो, तथा यथाशक्ति आदर पूर्वक व्रत का उत्सव भी करो इससे सभी कामनायें पूर्ण हो जायेंगी, इसमें कुछ भी विचार नहीं करना (श्लोक ६९ से ७५)

श्रीसूत-उवाच—

इति माहेश्वरीं वाचं निपीय मुनिसत्तमः ॥७६॥
प्रणम्य दण्डवद् भूमावाज्ञामादाय सादरः।
जगाम गौतमस्तस्मान्मार्कण्डेयाश्रमं प्रति ॥७७॥
तमागतं समालोक्य मार्कण्डेयो महामुनिः।
उत्थायादरतोवेगात्पुरोजग्राह गौतमम् ॥७८॥
स्वासने उपवेश्यादौ पप्रच्छ कुशलं मुनिः।

पूतं मेने स्वमात्मानं गौतमागमनात्किल ॥७९॥
परस्परं प्रशंसंतौ संलापं चक्रतुर्मुनिः ।
आकरो धर्म तत्त्वानां शिष्टानां हि समागमः ॥८०॥
मार्कण्डेयाया मुनये निजं स्वप्नं निवेदयत् ।
गौतमो सकलं यद्धि महेश्वराय निवेदितम् ॥८१॥

इस प्रकार श्रीमहेश्वरजी के वचनामृत पीकर मुनिश्रेष्ठ गौतम श्रीशिवजी को साष्टाङ्ग दण्डवत् प्रणाम करके आदर पूर्वक वहां से श्रीमार्कण्डेय आश्रम की ओर चले । श्रीमार्कण्डेय महामुनि ने गोतमजी को आते देखकर अत्यन्त प्रेमावेश में उठकर आदर पूर्वक आश्रम में लाकर अपने आसन पर बैठाया । अतिथि सत्कार विधि पूर्वक करके उनका कुशलमङ्गल पूछा, श्रीगौतम जैसे महात्मा आश्रम में पधारे हैं अतएव अपने आत्मा को उनके दर्शन से परम पवित्र हुआ मानकर प्रसन्न हुए । परस्पर एक दूसरे की दोनों महात्मा प्रशंशा विनय पूर्वक करते थे, महापुरुषों का समागम सभी धर्मतत्त्वों का भण्डार है। वार्तालाप करने के प्रसङ्ग में श्रीगौतममुनि ने अपने स्वप्न का सम्पूर्ण वृत्तान्त श्रीमार्कण्डेयमुनि को निवेदन किया जो पूर्व में श्रीमहादेवजी को निवेदन किया था । (श्लोक ७९ से ८१)

श्रीगौतम-उवाच —

महेश्वरस्य सान्निध्ये मुनेहं गत आसिषम् ।
स्वप्नाशयं देवदेवो सकलं निजगादह ॥८२॥
व्रतस्योत्सवमाहात्म्यं विधानं वा न चावदत् ।

श्वोभूते च व्रतं चैतन्ममाप्यस्ति चिकीर्षितम् ॥८३॥
संभार संप्रत्यशक्तो व्यग्रोव्रत चिकीर्षया ।
मार्कण्डेयं मुनिं गच्छ स त्वां सर्वं वदिष्यति ॥८४॥
इति शिववचनाद्ब्रह्मन् ! भवन्तं समुपागतः ।
किं व्रतोत्सव माहात्म्यं विधानं तस्य कीदृशम् ॥८५॥
किं पुण्यं किं फलं चास्य समस्तं विस्तराद्वद ।
भवोदीरित मार्गेण करिष्ये मुनिपुङ्गव ॥८६॥
इति गौतम वाक्यानि श्रुत्वा विस्मयमानसः ।
सानन्दं मधुरं वाक्यं मार्कण्डेय-उवाच ह ॥८७॥

हे मुनीश्वर ! मैं श्रीमहादेवजी के पास गया था तथा उनको अपने स्वप्न का आशय सर्वप्रकार से सुनाया था, तब उन्होंने कहा कि-श्रीसीता व्रतोत्सव का माहात्म्य तथा विधान कहने में मैं अभी असमर्थ हूँ क्योंकि कल मैं भी यही व्रत करने की तैयारी कर रहा हूँ उसके लिये श्रीजानकी जन्ममहोत्सव की सब सामग्री जुटाने में लगा हुआ हूँ तुम मार्कण्डेय मुनि के पास जाओ वही सबकुछ कर तुम्हारी जिज्ञासा शान्त करेंगे । श्रीशिवजी आज्ञा मानकर मैं आपके समीप आया हूँ । श्रीजानकी नवमी का व्रतोत्सव कैसे करना ? उसका माहात्म्य क्या है ? उसका विधान कैसा है ? उसका पुण्य क्या है ? उसका फल क्या है ? सब बातें विस्तार पूर्वक कृपा करके कहें । आपके ही कहे हुए मार्गानुसार हे मुनिवर ! मैं सब कुछ करूँगा । श्रीगौतमजी के ऐसे वचनों को सुनकर श्रीमार्कण्डेयजी बड़े आश्चर्य तथा आनन्द में भरे हुए

मन से मधुर वाक्य बोले (श्लोक ८२ से ८७)

श्रीमार्कण्डेय-उवाच—

श्रीगौतम महाप्राज्ञ सीताव्रत विधानकम् ।
पृष्टं यद्भवता तस्मात्त्रिलोक्यां भाग्यवानसि ॥८८॥
सीताव्रतकथायां ते उत्पन्ना सात्त्विकी मतिः ।
यस्मान्निर्धूत पापानां मतिरुत्पद्यते शुभा ॥८९॥
नानाजन्मार्जितैः पुण्यैस्तेऽस्मिन् जायते मतिः ।
व्रतानामुत्तमं चेदं वेदोक्तं कथयाम्यहम् ॥९०॥
शृणुष्वैकाग्र चित्तेन व्रतराजमनुत्तमम् ।
निष्कामबुद्ध्या यः कुर्यान्मोक्षं तस्मै प्रयच्छति ॥९१॥
पुण्यानामाकरश्चैतत्परमं पापनाशनम् ।
दद्यात्पुत्रीयते पुत्रं धनं दद्याद्धनीयते ॥९२॥
व्रतमेतद्धि कुर्वाणः ऐश्वर्यं लभते परम् ।
लोके पूज्यतमः श्रेष्ठः सभवेदपरानपि ॥९३॥
आप्नोति सकलान्कामान् यान्यान्वाञ्छति मानसे ।
व्रतस्याचरणाद्ब्रह्मन् नात्रकार्याविचारणा ॥९४॥
सनकादिभिराचार्यैः पृष्टो नारायणः स्वयम् ।
भगवन् श्रीपते सर्वं व्रतानामुत्तमं व्रतम् ॥९५॥
तद्ब्रूहि कृपया देव ! तुष्टो येन भवेद्भवान् ।
श्रीराम प्राप्तिः केनस्यादस्माकं भगवन्हरे ॥९६॥

श्रीमार्कण्डेयजी बोले-हे श्रीगौतमजी ! आप बड़े बुद्धिमान् हैं

जो श्रीसीताव्रत के विधान का आपने प्रश्न किया है त्रिभुवन में आप ही बडे भाग्यशाली हैं। जो श्रीसीताजी के व्रत के लिये आपके मन में ऐसे प्रीति उत्पन्न हुई है। जिसके सभी पाप नष्ट हो गये हैं उसीको ऐसी शुभ बुद्धि उत्पन्न होती है। अनेकों जन्मों के महान् पुण्यों के फल से इस व्रत को करने की इच्छा होती है, मैं सभी व्रतों में परमश्रेष्ठ श्रीजानकी नवमी के व्रत का वर्णन करके तुम्हें सुनाता हूं। आप एकाग्र मन से इसका श्रवण करिये जो निष्काम भावना से यह व्रत करता है उसको मोक्ष प्रदान करता है। यह तो पुण्यों का भण्डार हैं, परमपावन है, पापनाशक है, पुत्र चाहने वाले को पुत्र देता है धन चाहने वाले को धन देता है। इस व्रत को करने वाला अतुलनीय ऐश्वर्य प्राप्त करता है। वह अपने तथा पराये सभी लोकों में परमश्रेष्ठ पूज्यतम होता है। जो-जो मन में चाहता है सभी पदार्थ उसको प्राप्त हो जाते हैं। इस व्रत के करने से सब कुछ प्राप्त होता है इसमें कुछ भी संशय नहीं करना चाहिये! श्रीसनकादिक महात्माओं ने एकबार श्रीमन्नारायण श्रीपति भगवान् से यही प्रश्न किया था कि हे प्रभो! आप कैसे शीघ्र प्रसन्न हो सकते हैं! तथा श्री-रामजी की प्राप्ति हमलोगों को कैसे हो सकती है! कृपा करके सुनाइये (श्लोक ८८ से ९६)

श्रीनारायण-उवाच—

मत्सन्तुष्टेस्तस्यप्राप्तेश्चापि सन्ति बहून्यपि।
दानानि च व्रतान्यत्र मुनयः सनकादयः ॥९७॥

तावदेकादशी प्रोक्ता श्रीनृसिंहचतुर्दशी ।
श्रीरामनवमी चापि कृष्णजन्माष्टमी तथा ॥९८॥
चातुर्मास्य व्रतं चापि कार्तिकादि व्रतं तथा ।
कृच्छ्रचान्द्रायणादीनि ममतोषकराण्यहो ।९९॥
सर्वप्रियतमं श्रीमत्सीताया नवमी व्रतम् ।
मत्सन्तुष्टिस्तस्य प्राप्तिर्येन शीघ्रं मुनीश्वर ॥१००॥
यः करोति व्रतं चैतत्स मे ज्ञेयोऽति वल्लभः ।
तस्मै निरन्तरां भक्तिं श्रीरामस्यददाम्यहम् ॥१०१॥

श्रीमन्नारायण प्रभु ने कहा–मेरी सन्तुष्टि तथा श्रीकिशोरी जी की प्राप्ति के लिये बहुत से साधन हैं, दान-व्रत यज्ञादिक सब हैं, हे सनकादिक महात्माओ ! एकादशी श्रीनृसिंह चतुर्दशी श्रीरामनवमी-श्रीकृष्ण जन्माष्टमी-चातुर्मास्य-कार्तिकादि तथा कृच्छ्र-चान्द्रायणादि सब हमको सन्तुष्ट करने वाले हैं परन्तु जिसके करने से मेरी सन्तुष्टि तथा उनकी प्राप्ति शीघ्र हो ऐसा हमको परमप्रिय सर्वश्रेष्ठ व्रत तो श्रीसीतानवमी का व्रत ही है । जो इसको करता है वह हमको अत्यन्त प्रिय लगता है । उसको श्रीराम के चरणारविन्दों की अविचल भक्ति मैं प्रदान करता हूँ (श्लोक ९७ से १०१)

इति नारायणी वाचं श्रुत्वा तैः सनकादिभिः ।
व्रतमेतत्कृतं ब्रह्मन् ! भक्त्या नियतमानसैः ॥१०२॥
विधानं च त्वयाप्येतत्कर्त्तव्यं स्थिरचेतसा ।
चक्रतुः तु यथापूर्वं पार्वती परमेश्वरौ ॥१०३॥

यथोपदिष्टं मह्यं च तथा वक्ष्यामि गौतम !
त्रेतायुगे चोत्तराशांगते कमलिनीपतौ ॥१०४॥
सर्वर्तु निकरश्रेष्ठे ऋतौ तु कुसुमाकरे ।
मासि पुण्यतमे विप्र ! माधवे माधवप्रिये ॥१०५॥
नवम्यां शुक्ल पक्षे च वासरे मङ्गलेशुभे ।
पुष्यऋक्षे च मध्याह्न जानकीजनकालये ॥१०६॥
आविर्भूता स्वयं देवी योगेश्वेतेस्वनुत्तमा ।
एत्द्योगे कृतं चैतद्व्रतं प्रोक्तमनन्तकम् ॥१०७॥

श्रीसनकादिक महात्माओं ने श्रीमन्नारायण के इस प्रकार वचनों को सुनकर भक्तिभावना से मन को नियमित रखकर हे ब्रह्मन् ! इस व्रत को किया ! आपको भी जिस विधान से श्री शिव-पार्वती ने यह व्रत किया था उसी प्रकार से विधि पूर्वक करना चाहिये । उन्होंने पूर्वकाल में जो विधान मुझसे कहा था वह आपको कहता हूँ । हे श्रीगौतमजी ! त्रेतायुग में उत्तरायण के सूर्य थे-सभी ऋतुओं में श्रेष्ठ बसन्तऋतु थी-वैशाखमास शुक्ल पक्ष नवमी तिथि मंगलवार पुष्यनक्षत्र के योग में मध्याह्नकाल में श्रीजनकजी के घर श्रीजानकीजी प्रकट हुई थीं । इन श्रेष्ठ योगों से संयुक्त श्रीजानकी नवमी का व्रत अनन्तपुण्यप्रद है (श्लोक १०२ से १०७)

अष्टम्यां यदि विद्धास्यान्नवमी माधवे सिते ।
कुर्यान्नेदं व्रतं तस्यां कृतं चेन्न्यूनता भवेत् ॥१०८॥
मध्याह्न व्यापिनी ग्राह्या व्रतेस्मिन्नवमी तिथिः ।

दिनद्वयगतायां तु तस्यां कार्या परा नरैः ॥१०९॥
एतैर्योगैर्विनापि स्यात् तद्दिनं पापनाशनम् ।
व्रतानां नित्यमाम्नातं कर्तव्यं व्रतमुत्तमम् ॥११०॥
यस्तु नो कुरुते मोहाज्जानकीजन्म सम्भवम् ।
व्रतं स पच्यते घोरे नरके नात्रसंशयः ॥१११॥
तस्मिन्नहनि मूढात्मा भुनक्त्यन्नं तु यो नरः ।
भुंक्ते स कृमिसङ्घातं तत्पूयं खादति स्फुटम् ॥११२॥
न करोति हि यः श्रुत्वा व्रतानामुत्तमं व्रतम् ।
स महापातकी ज्ञेयः सर्वधर्मबहिष्कृतः ॥११३॥
कुरुते यो व्रतं सोऽपि पृथिवीदानफलं लभेत् ।
महा षोडशदानानां यज्ञानां मुनि पुङ्गवा ! ॥११४॥
तथैव सर्वतीर्थानां प्राप्नुयात्सकलं फलम् ।
सर्वभूतदयाँ कृत्वा फलं प्राप्नोति यज्जनः ॥११५॥
तदाप्नोति व्रतादस्मान्नात्र कार्याविचारणा ।

नवमी तिथि यदि अष्टमी से विद्धा हो तो उस नवमी का व्रत नहीं करना चाहिये, यदि करे तो न्यूनता होती है। श्रीजानकी नवमी मध्याह्नकाल व्यापिनी हो तो उसीका व्रत करना चाहिये। परन्तु नवमी दो हो तो दूसरी नवमी का ही व्रत करना चाहिये (तब मध्याह्न व्यापिनी का आग्रह नहीं रखना चाहिये) इन योगों के विना भी किसी वर्ष साधारण शुद्ध नवमी ही हो तो भी व्रत करना चाहिये, क्योंकि व्रत तो नित्य ही कहे गये हैं उस दिन किसी प्रकार व्रत करने से पापों का नाश हो जाता है। जो

[stamp]

मोहवश श्रीजानकी नवमी का व्रत नहीं करता है वह घोर नरक में जाता है इसमें कुछ भी संशय नहीं है। उस दिन जो विमूढात्मा जानसमझकर भी अन्न को भोजन करता है वह निश्चय ही कृमिकीट को ही खाता है। इस माहात्म्य को सुनकरके भी जो यह उत्तम व्रत नहीं करता है वह महापातकी है वह सर्वधर्म से बहिष्कृत हो जाता है। जो प्रेम से श्रीजानकी नवमी का व्रत करता है उसको सम्पूर्ण पृथिवी का दान देने का फल प्राप्त होता है। उसको स्वर्ण-पृथिवी-गाय कन्या तथा अन्नदानादिक सोलह महादान देने का फल प्राप्त होता है। हे मुनिश्रेष्ठ गौतम जी ! उसको सभी तीर्थों के स्नान का सम्पूर्ण फल तथा सभी जीवों के ऊपर दया करने का जो फल प्राप्त होता है वह सभी फल उसको श्रीजानकी नवमी के व्रत से ही प्राप्त होता (श्लोक १०८ से ११५)

उपवास क्रमं रामनवम्यादेर्यथो चरेत् ॥११६॥
जानकीप्रतिमादानं तत्रपूजनमाचरेत् ।
वित्तशाठ्यं न कुर्वीत सर्वधर्म क्रियादिषु ॥११७॥
पूजास्याद्वैष्णवे पीठे वेदिकोपरि संस्थिते ।
संस्कारं विधिवत्कृत्वा देवमावाह्य पूजयेत् ॥११८॥
पूजा पुरुषसूक्त्या च राघवस्य प्रशस्यते ।
श्रीसूक्त्या जानकी पूजा कार्य्या साधक सत्तमैः ॥११९
अन्येषां नाममन्त्रेण चतुर्थ्या नमसा सह ।
पुनः शंखेजलं कृत्वा ह्यर्घ्यं दद्याद्विचक्षणः ॥१२०॥

नर्तनं गीत वाद्यादि कृत्वा तद्दिवसं नयेत् ।
रात्रावपि महापूजां कृत्वा जागरमाचरेत् ॥१२१॥

उपवास का विधान श्रीरामनवमी आदि व्रतों के समान ही करे। श्रीजानकी प्रतिमा दान का पूजन भी यथाशक्ति करे। किसी भी धर्म कार्य में कभी भी धन की कृपणता न करे। पूजा वेदी पर श्रीवैष्णवपीठ बनाकर करे, प्रतिमा तथा पूजा के विधिवत् संस्कार करके देवता का आवाहन करे। श्रीरामजी की पूजा पुरुष सूक्त से करना उत्तम है तथा श्रीजानकीजी की पूजा उत्तम साधकों को श्रीसूक्त से करना चाहिये। दूसरे देवताओं के नाम में चतुर्थी तथा नमः लगाकर मन्त्र बना लेना चाहिये उसी नाम मन्त्र से उनकी पूजा करना चाहिये। पुनः शंख में जल भरकर अर्घ्य देना चाहिये। विलक्षण पुरुष को सम्पूर्ण दिवस गान-बजान भजन-कीर्तन में बिताना चाहिये। रात में भी महापूजा करते हुए जागरण करना चाहिये (श्लोक ११६ से १२१)

ततः प्रातर्दशम्यां च पूर्वोक्त विधिना द्विज ।
प्रतिमां पूजयित्वादौ आचार्यं पूजयेत्ततः ॥१२२॥
श्रीसूक्त मन्त्रतो विप्र दशम्यां विधिकोविदैः ।
एवं होमोऽपि कर्तव्यस्तर्पणश्चै व वैक्रमात ॥१२३॥
मूलेन होमयेद्विप्रैरष्टोत्तर सहस्रकम् ।
अष्टोत्तर शतं वापि पायसं शर्करायुतम् ॥१२४॥
दक्षिणां च यथाशक्तिस्ततः पूर्णाहुतिं चरेत् ।
पूर्णाहुति विधानेन कृत्वा च प्रतिमादिकम् ॥१२५॥

सीतायाः प्रीतये दद्यान्मण्डपादि विसृज्य च ।
सीताप्रीति वाचयित्वा ब्राह्मणाचार्य भाषितैः ॥१२६॥
अन्येभ्योपि यथाशक्ति भूयसीं दक्षिणां ददेत ।
पारणाह्ने द्विजान्सम्यक् भोजयित्वा तु भक्तितः ॥१२७॥
आचार्याय प्रदातव्या दक्षिणा काञ्चनं शुभम् ।
गां सवत्सां नवं वस्त्रं रत्नं धान्यं गृहादिकम् ॥१२८॥
अथवा शक्तितो देयं यथा तुष्येद द्विजोत्तमः ।
विधिना पारणं कुर्य्याद् भूमिशायी च मानवः ॥१२९॥
तस्योपरि सदा प्रीता सीतास्यान्नात्र संशयः ।

हे ब्राह्मण ! दशमी के दिन प्रातःकाल पूर्वोक्त विधि से पहले प्रतिमा का पूजन करके तब आचार्य का पूजन करे । तथा दशमी के दिन विधि जानने वाले विद्वान् ब्राह्मणों के द्वारा श्रीसूक्त से हवन भी करावे, एक हजार आठ अथवा एक सौ आठ आहुति देवे । घी-शक्कर मिलाके पायस का होम करावे, तब यथाशक्ति दक्षिणा देकर पूर्णाहुति करावे । विधि पूर्वक पूर्णाहुति कराने के बाद मण्डप के देवताओं का विसर्जन कराके प्रतिमादिक सब सामग्री आचार्य ब्राह्मण को समर्पण कराये । "ब्राह्मणों तथा आचार्य के मुख से ये तुम्हारा कार्य श्री श्रीसीताजी की प्रसन्नता पूर्वक कृपा प्राप्ति के लिये हो" ऐसा आशीर्वाद वचन प्राप्त करे । अन्य ब्राह्मणों को भी यथाशक्ति विशेष दक्षिणा प्रदान करे । तथा पारण के दिन यथाशक्ति पवित्र सदाचारी श्रीवैष्णव ब्राह्मणों को भोजन कराके भक्ति पूर्वक दक्षिणा दे । आचार्य

को-सोना-चांदी-भूमि-सवत्सा गाय-नवीन वस्त्र-रत्न-अन्न-घर इत्यादि सब अथवा यथाशक्ति जो कुछ दे सके देवे। जिससे ब्राह्मण प्रसन्न होकर आशीर्वाद प्रदान करे। इस प्रकार विधिपूर्वक पारण करके उस दिन भी भूमि पर ही शयन करे। इस प्रकार जो व्रत करता है। उस पर श्रीसीताजी परम प्रसन्न हो जाती हैं इसमें कुछ भी संशय नहीं हैं। (श्लोक १२२ से १२९)

यद्गृहे नित्यपूजास्यात्प्रतिमा सा च गौतम ॥१३०॥

तस्यामेवोत्सवं कुर्य्याज्जानकयाःपूजनादिकम् ।

नित्यपूजा न यस्य स्यात्सीतायाः प्रतिमा यदा ॥१३१॥

शालग्राम शिलायां सः कुर्य्यात्सीतोत्सवं बुधः ।

पूर्वोक्त विधिना सीता नवम्यां उत्सवे द्विज ॥१३२॥

पूजा कुर्वीत वै तस्यां सर्वा पञ्चामृतादिभिः ।

तुष्येतां तेन वै तस्मिन् जानकी रघुनन्दनौ ॥१३३॥

हे गौतम! जिसके घर में श्रीजानकीजी की नित्यपूजा होती है, उसकी उसी नित्यपूजित श्रीजानकीजी की प्रतिमा का ही पूजन इस महोत्सव में भी करना चाहिये, परन्तु जिसके घर में श्री-सीताजी की प्रतिमा का नित्यपूजन नहीं होता है उसको तो श्रीशालिग्राम शिला पर ही श्रीजानकीनवमी का महोत्सव पूर्वोक्त विधि से पञ्चामृतादिक षोडशोपचार पूजन करना चाहिये। जो ऐसा भक्तिपूर्वक करता है उस पर श्रीजानकी रघुनन्दनजू युगल प्रभु परमप्रसन्न होते हैं (श्लोक १३० से १३३)

एकादश्यां समानीय द्वादश्यां विल्वमर्पणाम् ।

त्रयोदश्याञ्च विधिवद्रजनी चूर्णमर्पणम् ॥१३४॥
चतुर्दश्यां समुत्थाय प्रातःकाले विशेषतः ।
क्षौरादिकं कारयित्वा भोजयेद् द्विजान्बहून् ॥१३५॥
अतिथिभ्योऽन्नदानं च कर्तव्यं तद्दिने किल ।
सन्तोष्य सकलान् लोकान् कुटुम्ब सहितो मुने ॥१३६॥
रात्रौ जागरणं कुर्य्यात् षष्ठीपूजन पूर्वकम् ।
कज्जलोद्वर्त्तन चैव सिन्दूर तैल वीटिकाम् ॥१३७॥
हविष्यञ्च तथा लेह्यं पञ्चखाद्यादिकमुत्तमम् ।
शष्कुली-लड्डुकं चैव सुनेत्रायै समर्पयेत् ॥१३८॥
एवं कुर्य्याद् द्वादशाहे जानकीजन्मनोत्सवम् ।
स आत्मलाभ सम्प्राप्य जीवन्मुक्तः स्वयं भवेत् ॥१३९॥
एवमाराधितो रामः सीतयासह भक्तितः ।
ददाति परमान्कामान् सुराणामपि दुर्लभान् ॥१४०॥

एकादशी के दिन आचार्य के घर से (अथवा मन्दिर से) श्रीयुगल प्रभु की प्रतिमा लाकर पुनः पूजा करे। द्वादशी के दिन बेल (श्रीफल) तथा बिल्वपत्र समर्पण मूलमन्त्र से १०८ बार करे। त्रयोदशी के दिन हरिद्रा (हल्दी) चूर्ण समर्पण करे। चतुर्दशी के दिन प्रातःकाल उठकर क्षौर (मुण्डन) आदि कराके बहुत से ब्राह्मणों को भोजन तथा अतिथि अभ्यागतों को अन्नदान करे। उस दिन भजन कीर्तन तथा षष्ठी का पूजन करते हुए जगते हुए रात बितावे। कुटुम्ब सहित सभी लोगों को प्रसाद देकर सन्तुष्ट करे तथा काजल-उबटन-सिन्दूर-तैल-पानबीड़ा-हविष्यान्न-भोजन

चटनी-लड्डु-पूरी तथा पञ्जरी आदि श्रीसुनयना अम्बा को समर्पण करे। इस प्रकार चतुर्दशी तक अथवा द्वादशी तक जो श्रीजानकी जन्म का उत्सव करता है वह आत्मा का परमलाभ प्राप्त कर स्वयं जीवनमुक्त हो जाता है। इस प्रकार श्रीसीताजी के सहित श्रीराम की आराधना करने से वह सभी कामनायें जो भले देवताओं को भी दुर्लभ हो ऐसी इच्छायें भी पूर्ण करते हैं। (श्लोक १३४ से १४०)

नानेन सदृशं पुण्यं नानेन सदृशं व्रतम् ।
श्रीरामतोषकोपायः नानेन सदृशः क्वचित् ॥१४१॥
सुरापी-ब्रह्महा-स्तेयी-गुरुपत्नी प्रधर्षकः ।
शुद्धतामाप्नुयुः सर्वे प्रयान्ति परमां गतिम् ॥१४२॥
इत्थं निगदितं सर्वं जानकीजन्मनो व्रतम् ।
कुर्वन्तीन्द्रादयः सर्वे व्रतमेतदनुत्तमम् ॥१४३॥
गन्धर्वाः किन्नराः सर्वे गुह्यकाः सिद्धचारणाः ।
नागाश्च मुनयश्चापि प्रकुर्वन्ति व्रतं द्विज ॥१४४॥
यः कुर्य्याद् व्रतमेतद्धि जानकी जन्म सम्भवम् ।
समलभेत्सकलं ब्रह्मन् ! पृथिवीयात्राफलं किल ॥१४५॥
तथा षोडशदानानां फलं प्राप्नोति मानवः ।
अश्वमेधादि यज्ञानां तीर्थानामपि गौतम ॥१४६॥
अत्युग्रतपसाँ चापि वेदोक्तान्पुंश्चविन्दति ।
गौतमेदं व्रतं तस्मादवश्यं कुरु भक्तितः ॥१४७॥
नेदं वक्तुं समर्थास्ते फणीन्द्रश्चतुराननाः ।

कृताद् व्रतोत्तमादस्माद् दीर्घायुः प्राप्तवानहम् ॥१४८॥
व्रतानां नित्यमाम्नातं भक्तिदं कुर्वतां सताम् ॥

श्रीमार्कण्डेय मुनि ने कहा—हे गौतम ! श्रीजानकी नवमी के समान कोई पुण्य नहीं है, इसके समान कोई व्रत नहीं हैं, श्री रामजी को प्रसन्न करने वाला इससे श्रेष्ठ कोई उपाय नहीं है। मदिरा पीने वाला-ब्रह्म हत्यारा-चोरी करने वाला-गुरुकी स्त्री के साथ बलात्कार करने वाला भी अपने पापों का प्रायश्चित करना चाहे तो यह उसको भी पवित्र बनाकर परमगति देता है ! यह मैंने श्रीजानकी नवमी का विधान माहात्म्य सबकुछ जो मैं जानता हूं कहकर सुनाया है। इसको इन्द्रादिक देवता-गन्धर्व किन्नर-गुह्यक-सिद्ध-चारण-नागदेवता-मुनि ऋषि इत्यादि सभी करते हैं। हे द्विज ! जो यह श्रीजानकी जन्म जयन्ती का व्रत करता है उसको सम्पूर्ण पृथिवी यात्रा का फल प्राप्त होता है। षोडश महादान का-अश्वमेधादि यज्ञों का तथा सभी तीर्थों के स्नान का फल प्राप्त होता है। हे गौतम ! वह मनुष्य अत्यन्त उग्र तपस्या का तथा वेदोक्त कर्म धर्म का सम्पूर्ण फल प्राप्त करता है। इसलिये हे गौतम ! आप इसको अतिशय भक्ति प्रीति पूर्वक अवश्य-मेव करिये। इसका सम्पूर्ण माहात्म्य तो सहस्रमुख शेष भगवान् तथा चतुरानन ब्रह्मा भी वर्णन करने में समर्थ नहीं हो सकते हैं। इसीके महान् प्रताप से मैं दीर्घ आयुष्य प्राप्त कर सका हूँ। व्रत करने वाले सज्जनों को यह श्रीजानकी नवमी व्रत सदा ही भक्ति प्रदान करता है।

श्रीसूत-उवाच—

मुनये गौतमायेत्थं जानकी जन्म सम्भवम् ॥१४९॥
व्रतं च व्रतमाहात्म्यं विधानं श्रुति चोदितम् ।
जगाद सकलं व्यक्तं मार्कण्डेयो मुनीश्वरः ॥१५०॥
तस्माद्विज्ञाय सकलं मकरोद् गौतमो व्रतम् ।
आसवान् सफलं सर्वं पूर्वोक्त विधिवाञ्छितम् ॥१५१॥
व्रतमेतद्विजानीत गुह्याद्गुह्यतरं द्विजाः ।
अश्रद्धालुषु नो वाच्यं पाखण्डिषु तथैव च ॥१५२॥
नवम्यां माधवेमासि शुक्ले पक्षे कुजेहनि ।
पुष्यर्क्षेऽनन्त फलदं कृतमेतद्व्रतं भवेत् ॥१५३॥
कुर्याज्जन्मनवम्यां तु व्रतं योगविनाप्यदः ।
मासवृद्धौ नवम्येव परा नो कृष्यते बुधैः ॥१५४॥
श्रीरामोन्मानतो यस्माज्जानकीयं कनीयसी ।
मुनयः सर्वथा कार्यं न वन्ध्यं दिवसं नयेत् ॥१५५॥

श्रीसूतजी ने कहा—श्रीगौतम मुनि को श्रीजानकी जन्म महोत्सव व्रत का वेदविहित विधान तथा माहात्म्य श्रीमार्कण्डेय मुनीश्वरजी ने भलीभांति कह सुनाया । उनके द्वारा सम्पूर्णव्रत विधान को समझकर श्रीगौतमजी ने विधिपूर्वक व्रत करके पूर्व प्रकरण में कहे हुए सम्पूर्ण फलसहित मनवाञ्छित सब कुछ पुण्य प्राप्त किया । हे ब्राह्मणों ! यह गुप्त से भी गुप्त व्रत जानिये । इसको अश्रद्धालु पाखण्डी अनधिकारी मनुष्यों को कभी भी नहीं सुनाना चाहिये । वैशाख मास-शुक्ल पक्ष-नवमी तिथि-मङ्गलवार

तथा पुष्यनक्षत्र के योग में यदि यह व्रत किया जाय तो अनन्त फल प्रदान करता है, बिना योगों के भी केवल शुद्ध नवमी का व्रत भी करना ही चाहिये। मासवृद्धि (अधिकमास-पुरुषोत्तममास) हो तो नवमी ही इष्ट है अर्थात् दूसरे महीने के शुक्लपक्ष की शुद्ध वैशाख की नवमी ही करनी चाहिये। जैसे श्रीरामजी की उपमा में श्रीजानकीजी लोकलीला में छोटी मानी जाती हैं वैसे ही अधिक मास की तिथि न लेकर साधारण मास की ही नवमी लेनी चाहिये। हे मुनीश्वरो! व्रत तो किसी न किसी प्रकार अवश्य करना चाहिये। श्रीजानकी नवमी का दिन व्यर्थ ही वंध्य न खो देना चाहिये (श्लोक १४९ से १५५)

पूर्वोदिते विधानेचेदशक्तो मानवो भवेत्।
उपवासं प्रकुर्वीत केवलं भक्तिचेतसा ॥१५६॥
चत्वारश्च तथा वर्णा आश्रमाश्च विशेषतः।
कुर्युरेवं व्रतं नित्यं जरठस्तरुणोऽर्भकाः ॥१५७॥
स्त्रीपुंभिश्च तथा नित्यं कर्तव्यं व्रतमुत्तमम्।
यः करोति न मूढात्मा स महान् पातकी भवेत् ॥१५८॥
अन्नमाश्रित्य तिष्ठन्ति महापापानि तद्दिने।
सर्वश्चान्नं न भुञ्जीत सीतायाः प्राप्तयेऽपि च ॥१५९॥

पक्षे सिते जगति माधवमासि भक्त्या—
कुर्वन्ति वै व्रतमिदं नवमी तिथौ ये।
पुण्यर्क्षके किल लभन्तिहि विष्णुलोक—
मेकान्त भक्तिमपि जन्मजराविमुक्ताः ॥१६०॥

पूर्वोक्त सभी विधान करने में भक्त पुरुष यदि अशक्त हो तो श्रद्धापूर्वक केवल उपवास ही करे। चारों वर्ण चारों आश्रम स्त्री-पुरुष-नपुंसक-बाल-युवा-वृद्ध सभी को यह व्रत करने का अधिकार है। नित्य ही करने योग्य इस व्रत को जो मूढ आत्मा नहीं करता है वह महान् पातकी है। क्योंकि उसदिन सभी महापाप अन्न में निवास करते हैं इसलिये अन्न तो सर्वथा त्याग ही देना चाहिये श्रीजानकीजी की प्रसन्नता के लिये भी उसदिन कम से कम अन्न तो न खाय, फलाहार भले करले।

शुक्लपक्ष-वैशाख मास की नवमी तिथि को जो भक्ति पूर्वक श्रीजानकीजी के जन्मका व्रत करते हैं, वह यदि पुष्य नक्षत्र से युक्त मिल जाय तो जगत के मानव निश्चय ही श्रीविष्णुलोक प्राप्त करते हैं तथा जन्म-मरण-जराव्याधि रहित हो जाते हैं (श्लोक १५६ से १६०)

हरिः ॐ इति श्रीभविष्यपुराणे श्रीसीतानवमी व्रतमाहात्म्यम् सम्पूर्णम् ॥

अथार्घ्य मन्त्रः—

ॐ रामचन्द्र महेष्वास रघुवीर नृपोत्तम ।
गृहाणार्घ्यं मयादत्तं कृपया रघुनन्दन ॥

ॐ उत्पन्नासि महाभागे स्वर्णलाङ्गलपद्धतौ ।
गृहाणार्घ्यं मयादत्तं कृपया मिथिलेशजे ॥

ॐ विदेहाधिप राजेन्द्र मिथिलेश कृपानिधे ।
गृहाणार्घ्यं मयादत्तं सर्वसिद्धिं प्रयच्छ मे ॥

इन मन्त्रों को पढ़कर क्रमशः श्रीराम-श्रीसीता तथा श्रीविदेह महाराज को अर्घ्य समर्पण करे।

इति श्रीजानकी नवमी कृत्यम्—

अथ दशमी कृत्यम्

ततः दशम्यां प्रातरुत्थाय नित्यकृत्य कृत्वा प्रतिमां पूजयित्वा आचार्य पूजयेत् ॥ ततः श्रीसूक्तेन तथा तत्तन्मूलमन्त्रेण यथाशक्तिः हवन कुर्य्यात् ॥ तत्र क्रमः ॥ आचम्य प्राणायामं कृत्वा स्थंडिलं कुशैः परिसमुह्य । तानैशान्यामपरित्यज्य गोमयेनोपलिप्य स्रुवेन प्रादेशमात्रं त्रिरुल्लिख्य अनामिकाङ्गुष्ठेन उद्धृत्य तोयेनाभ्युक्ष्य ॥ ॐ विष्णु ॥ ॐ शिव ॥ ॐ इन्द्र ॥ ॐ ब्रह्म ॥ ॐ यम् ॥ ॥ ॐ चन्द्र ॥ सम्पूज्य कांस्य पात्रेणाग्निमादाय जलेनमण्डलं कृत्वा अग्निमावाहयेत् ।

ॐ सर्वलक्षणसम्पन्नं जटामुकुटमण्डितम् ।
चतुः श्रोत्रं द्विनाशं च खन्नेत्रं द्विमस्तकम् ॥
द्विमुखं सप्तजिह्वं च सप्तहस्त त्रिपादकम् ।
एवमग्नि परिज्ञात्वा होमं कुर्याद्यथाविधिः ॥

वरुणस्तु पिता तस्य माता ह्यरुणिरेव च ।
शाण्डिल्य गोत्रीयो ह्यग्निः दशयोजन विस्तृतः ॥
अधोमुखः सदा वह्निर्यज्ञेष्वूर्ध्वमुखो विभुः ।
तस्मादूर्ध्वमुखं भूत्वा स्वाहां गृह्णीष्व तत्त्वतः ॥

"ॐ अग्न्य आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातयेनिहोता सत्सु बर्हिषि" इति अग्निमावाह्य ॐ अग्नये नमः सम्पूज्य । ॐ ब्रह्मणे

स्वाहा इदं ब्रह्मणे नमः ॥१॥ ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये नमः ॥२॥ ॐ ग्रहेभ्यः स्वाहा इदं ग्रहेभ्यो नमः ॥३॥ ॐ कश्यपाय स्वाहा इदं कश्यपाय नमः ॥४॥ ॐ अनुमते स्वाहा इदं अनुमतये नमः ॥५॥ ॐ इन्द्राय स्वाहा इदमिन्द्राय नमः ॥६॥ ॐ अग्नये स्वाहा इदमग्नये नमः ॥७॥ ॐ सोमायस्वाहा इदं सोमाय नमः ॥८॥ ॐ भूः स्वाहा इदमग्नये नमः ॥९॥ ॐ भुवः स्वाहा इदं वायवे नमः ॥१०॥ ॐ स्वाहा इदं सूर्य्याय नमः ॥११॥ ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा इदं प्रजापतये नमः ॥१२॥ प्रत्येक मन्त्र से १-१ आहुति देवे ।

ॐ राँ रामाय नमः स्वाहा । ॐ श्रीं सीतायै नमः स्वाहा । ॐ लंक्ष्मणाय नमः स्वाहा । ॐ भं भरताय नमः स्वाहा । ॐ शं शत्रुघ्नाय नमः स्वाहा । ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः हनुमते स्वाहा । ॐ साम्ब शिवाय नमः स्वाहा । ॐ ह्रीं क्लीं चारुशीलायै नमः स्वाहा । ॐ ह्रीं क्लीं सुभगायै (श्रीचन्द्रकलायै) नमः स्वाहा । ॐ गुं गुरवे नमः स्वाहा । प्रत्येक मन्त्र से १०-१० आहुति देवे ।

ॐ अस्य हिरण्यमिति पञ्चदशर्चस्य सूक्तस्याश्वादायी सप्तर्चस्य सूक्तस्य श्रीनन्दकर्दम-चिक्लिता ऋषयः ।श्रीर्देवताऽनुष्टुप् छन्दः । चतुर्थीप्रस्तारपंक्ति परेद्वे अन्त्या च त्रिष्टुपः पञ्चदस्युपरिष्टाद् बृहतीलक्ष्मी हृदयभूता श्रीसीता परितुष्टये विनियोगः । अस्य मन्त्रः । ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं महालक्ष्म्यै स्वाहा ।

ॐ इच्छाज्ञानक्रिया शक्तित्रयं यद्भाव साधनम् ।

तद् ब्रह्मसत्तासामान्यं सीतातत्त्वमुपास्महे ॥

❀ अथ श्रीसूक्तम् ❀

ॐ हिरण्यवर्णां हिरणीं सुवर्णरजतस्रजाम् ।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह-स्वाहा ॥१॥
ॐ तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम्-स्वाहा ॥२॥
ॐ अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनाद प्रमोदिनीम् ।
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मादेवी जुषताम्-स्वाहा ॥३॥
ॐकांसोस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम् ।
पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम्-स्वाहा ॥४॥
ॐचन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियंलोके देवजुष्टामुदाराम् ।
तां पद्मनेमिं शरणमहं प्रपद्ये ऽलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणोमि-
स्वाहा ॥५॥
ॐआदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथबिल्वः ।
तस्य फलानितपसानुदन्तु मायाऽन्तरायाश्च बाह्याऽलक्ष्मीः-
स्वाहा ॥६॥
ॐ उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह ।
प्रादुर्भूतोस्मि राष्ट्रे ऽस्मिन् कीर्तिमृद्धिददातु मे-स्वाहा ॥७॥
ॐ क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम् ।
अभूतिमसमृद्धिं च सर्वान्निर्णुद मे गृहात्-स्वाहा ॥८॥
ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् ।

ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्-स्वाहा ॥९॥
ॐ मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि ।
पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः-स्वाहा ॥१०॥
ॐ कर्दमेन प्रजाभूता मयि सम्भव कर्दम ।
श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम्-स्वाहा ॥११॥
ॐ आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे ।
नि च देवी मातरं श्रियं वासय मे कुले-स्वाहा ॥१२॥
ॐ आर्द्रां पुस्करिणीं पुष्टिं पिङ्गलां पद्ममालिनीम् ।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो मऽआवह-स्वाहा ॥१३॥
ॐ आर्द्रां यः करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम् ।
सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो मऽआवह-स्वाहा ॥१४॥
ॐ तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं प्रभूतिं गावोदास्योऽश्वान् विन्देयं पुरुषानहम्-स्वाहा ॥१५॥
ॐ यः शुचिः प्रयतोभूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम् ।
श्रियः पञ्चदशर्चञ्च श्रीकामः सततं जपेत्-स्वाहा ॥१६॥

❀ इति श्रीसूक्तम् ❀

❀ अथ लक्ष्मी सूक्तम् ❀

ॐ सरसिजनिलये सरोजहस्ते धवलतरांशुकगन्धमाल्यशोभे ।
भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे त्रिभुवनभूतिकरि प्रसीद मह्यम्-स्वाहा ॥१॥

ॐ धनमग्निर्धनं वायुर्धनं सूर्यो धनं वसुः।
धनमिन्द्रो बृहस्पतिर्वरुणां धनमश्विनौ-स्वाहा ॥२॥
ॐ वैनतेय सोमं पिब सोमं पिबतु वृत्रहा।
सोमं धनस्य सोमिनो मह्यं ददातु सोमिनः-स्वाहा ॥३॥
ॐ न क्रोधो न च मात्सर्यं न लोभो नाऽशुभा मतिः।
भवन्ति कृतपुण्यानां भक्तानां सूक्तजापिनाम्-स्वाहा ॥४॥
ॐ पद्मानने पद्मउरू पद्माक्षि पद्मसम्भवे !
तन्मे भजसि पद्माक्षि येन सौख्यं लभाम्यहम्-स्वाहा ॥५॥
ॐ अश्वदायी-गोदायी धनदायी महाधने।
धनं मे जुषतां देवि सर्वकामांश्च देहि मे-स्वाहा ॥६॥
ॐ पुत्र-पौत्रं धनं धान्यं हस्त्यश्वादि गवे-रथम्।
प्रजानां भवसि माता आयुष्मन्तं करोतु मे-स्वाहा ॥७॥
ॐ विष्णुपत्नीं क्षमां देवीं माधवीं माधवप्रियाम्।
विष्णुप्रियां सखीं देवीं नमाम्यच्युतवल्लभाम्-स्वाहा ॥८॥
ॐ महालक्ष्म्यै च विद्महे विष्णुपत्न्यै च धीमहि।
तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात्-स्वाहा ॥९॥
ॐ पद्मानने पद्मिनि पद्मपत्रे पद्मप्रिये पद्मदलायताक्षि।
विश्वपिये विश्वमनोनुकूले त्वत्पादपद्मं मयि सन्निधत्स्व ॥१०॥
ॐ आनन्दः कर्दमश्चैव चिक्लीत इति विश्रुताः।
ऋषयश्च श्रियः पुत्रा मयि श्रीर्देवी देवता-स्वाहा ॥११॥
ॐ ऋणरोगादिदारिद्र्यं पापश्च अपमृत्यवः।

भयशोकमनस्तापा नश्यन्तु मम सर्वदा—स्वाहा ॥१२॥
ॐ श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधाच्छोभमानं महीयते ।
धनधान्यं पशुं बहुपुत्रलाभंशतसंवत्सरं दीर्घमायुः—स्वाहा॥१३॥

[1] ॥ इति लक्ष्मी सूक्तम् सम्पूर्णम् ॥

ॐ श्रींसीतायै नमः । ॐ जनकनन्दिन्यै विद्महे रामवल्लभायै धीमहि तन्नः सीता प्रचोदयात् । स्वाहा । इति होमकृत्वा ॐ अग्नयेस्विष्टकृते स्वाहा । इदमग्नयेस्विष्टकृते नमः । ॐ मूर्द्धानंदिवो रतिं पृथिव्या वैश्वानरमृत अजातमग्नि कविगूं सम्राजमतिथि जनानामासन्ना पात्रं जनयन्त देवाः स्वाहा । इति पूर्णाहुतिं दद्यात् । ततो दशांशं तर्पणं कृत्वा तद्दशांशेनमार्जनम् । ततः जलेनमण्डलं कृत्वा ॐ गच्छगच्छ सुरश्रेष्ठ स्वस्थाने परमेश्वर । यत्र ब्रह्मादयो देवा तत्र गच्छ हुताशन । ततः त्र्यायुषं यमदग्नेरिति ललाटे । ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषमिति ग्रीवायाम् । ॐ यद्देवेषु आयुषमिति दक्षिण बाहुमूले । ॐ तन्नोस्त्र्यायुषमिति हृदि । अथाभिषेकः—

ॐ सुरास्त्वामभिषिञ्चन्तु ब्रह्मा विष्णु महेश्वराः ।
वासुदेवो जगन्नाथस्तथा सङ्कर्षणो विभुः ॥१॥
प्रद्युम्नश्चानिरुद्धाश्च भवन्तु विजयाय ते ।
आखण्डलोग्निर्भगवान् यमो वैनिऋतिस्तथा ॥२॥
वरुणः पवनश्चैव धनाध्यक्षस्तथा शिवः ।

---

[1] मूल ग्रन्थ में लक्ष्मीसूक्त के केवल क्रमहीन ७ मंत्र ही दिये हैं तथा "हरि ॐ इति श्रीलक्ष्मी सूक्त सम्पूर्णम्" लिखा है अतः यहां पूरा श्रीलक्ष्मी सूक्त पाठ दिया गया है ।

ब्रह्मणः सहितः शेषो दिक्पालाः पान्तु वः सदा ॥३॥
कीर्तिर्लक्ष्मीर्धृतिर्मेधो पुष्टिः श्रद्धाक्रियमतिः ।
बुद्धिर्लज्जा वपुः शान्ति स्तुष्टिः कान्तिश्च मातरः ॥४॥
एतास्त्वामभिषिञ्चन्तु देवपत्न्यः समागताः ।
आदित्यश्चन्द्रमा भौमोबुधजीव सिताऽर्कजाः ॥५॥
ग्रहास्त्वामभिसिञ्चन्तु राहुकेतुश्चतर्पिताः ।
देवदानवगन्धर्वा यक्षराक्षसपन्नगाः ॥६॥
ऋषवो मनवोगावो देवमातर एव च ।
देवपत्न्यो द्रुमानागा दैत्याश्चाप्सरसांगणाः ॥७॥
अस्त्राणि सर्वशस्त्राणि राजानोवाहनानि च ।
औषधानि च रत्नानिकालस्यावयवाश्च ये ॥८॥
सरितस्सागराश्शैलास्तीर्थानि जलदानदाः ।
एते त्वामभिषिञ्चन्तु सर्वकामार्थसिद्धये ॥९॥
॥ इत्यभिषेकः समाप्तः ॥ अथप्रतिमादान मन्त्रः ॥
"इमां स्वर्णमयीं सीताप्रतिमां समलङ्कृताम् ।
जानकीप्रीतये दास्ये जानक्या प्रीतिरस्तु मे ॥"

यह स्वर्णनिर्मित वस्त्रभूषण से अलङ्कृत श्रीजानकीजी की प्रतिमा मैं श्रीजानकीजी की कृपा प्रीति प्राप्त करने के लिये आपको अर्पण करता हूं । इससे श्रीजानकीजी की कृपा प्रसन्नता मुझ पर हो ।" ऐसा पढकर प्रतिमा का दान करे । ततोभूयसीं दक्षिणां दत्त्वा ब्राह्मणान् भोजयित्वा स्वयं भुञ्जीत ।

॥ इति दशमी कृत्यम् ॥

अथ एकादश्यां रात्रौ श्रीफलमादाय प्रतिमा निकटे संस्थाप्य पूजयेत् । ॐ चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टा-मुदाराम् । तां पद्मनेमिं शरणमहं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणोमीति पूजयित्वा जागरणं कुर्य्यात् ॥ इति एकादशी कृत्यम् ॥

अथ द्वादश्यां प्रातःकाले नित्यकृत्यं कृत्वा ॐ आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ बिल्वः तस्य फलानि तपसा-नुदन्तु मायान्तरायाश्चबाह्या अलक्ष्मीः । शयनेन श्रीफलमर्पयेत् ।
॥ इति द्वादशी कृत्यम् ॥

ततः त्रयोदश्यां रजनीचूर्णमर्पयेत् ॐ कुंकुमागरु कस्तूरी कर्पूरादि सुवासितम् । श्रीचूर्णं गृह्यतां देवि सीते कल्याणदा भव ।
॥ इति त्रयोदशी कृत्यम् ॥

ततः चतुर्दश्यां प्रातः क्षौरं कृत्वा स्नात्वा नित्यकर्मं कृत्वा ब्राह्मणान् भोजयित्वा रात्रौ सूतिगृहे श्रीषष्ठि भट्टारिका पूजनं कार्यम् ॥ अनेन क्रमेण ॥ आदौसंकल्प्य ॐ अद्येत्यादि ममाभिनवजात कुमार्य्याः श्रीसीतादेव्याः सर्वग्रह सूचितारिष्ट निवृत्तिपूर्वक सर्वोपद्रव शान्तिकामः साङ्ग सपरिवार सायुध बाहनायै षष्ठिदेव्याः पूजा बलिदानमहं करिष्ये इति संकल्प्य वेदोक्त विधिना पूजयेत् रात्रौ जागरणं कुर्य्यात् ॥

[१] ॥ हरिः ॐ इति श्रीमहोत्सवार्णवे श्रीजानकीजन्मोत्सव व्रत विधानं सम्पूर्णम् ॥

---

[१] यह पूजन-हवनादि कार्य कर्मकाण्डी विद्वान सभी ब्राह्मण प्रायः जानते ही हैं अतएव इसकी भाषाटीका लिखकर ग्रंथ विस्तार नहीं किया है । भाषा भी सरल है चतुर बुद्धिमान सज्जन भी साधारणतया समझ सकते हैं ।

❀ श्रीजनकनन्दिन्यै नमः ❀

॥ श्रीजानकीनवमी व्रतकथा ॥

✱ माहात्म्यम् ✱

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् ।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत् ॥१॥

ऋषयः ऊचुः—

सूत सूत महाभाग वद नो वदतां वरः ।
श्रीसीतायाः समुत्पत्तिं सर्वपापहरां शुभाम् ॥२॥

श्रीसूत उवाच—

शृणुध्वं मुनयः सर्वे कथां पौराणिकीं शुभाम् ।
यस्याः स्मरणमात्रेण मुक्तिभागी भवेन्नरः ॥३॥
विदेहेन समापृष्टो नारदो देवदर्शनः ।
अहं तत् सम्प्रवक्ष्यामि नारदो यदुवाच तम् ॥४॥
एकदा नारदः श्रीमान् पर्यटन् सकलां महीम् ।
रणयन्त वीणां प्रागाद् विदेहनगरं शुभम् ॥५॥
दूरादागतमालोक्य विदेहो मिथिलाधिपः ।
अभ्युत्थानं चकाराशु प्रीत्या नृपतिसत्तमः ॥६॥
स्वर्णसिंहासने स्थाप्य पाद्यार्घ्याचमन वन्दनैः ।

सम्पूज्य स्वस्थचित्तं तं पप्रच्छ विनयान्वितः ॥७॥

श्रीशौनकादिक महर्षियों ने एकबार श्रीसूतपुराणीजी से विनय पूर्वक कहा कि-हे सूतजी ! आप तो सभी वक्ताओं में परमश्रेष्ठ हो, आज तो कृपा करके समस्त पापों को हरण करने वाली श्रीसीताजी के जन्म की शुभ कथा हम सबका सुनाइये। यह सुनकर श्रीसूतजी ने कहा कि-हे सन्त महात्माओं ! जिसका स्मरण करने से भी मनुष्य मुक्ति प्राप्त करता हैं ऐसी अत्यन्त प्राचीन ऐतिहासिक परम शुभ कथा मैं कहता हूँ। आप सब प्रेम से श्रवण करिये। देवदर्शन श्रीनारदजी से ऐसा ही प्रश्न श्रीविदेह महाराज ने किया था उसके उत्तर में श्रीनारदजी ने जो कथा सुनाई थी-आज मैं आप सबको वही कथा भलीभांति सुनाता हूँ ॥ १-१ ॥

एकबार श्रीमान् नारदजी महाराज सम्पूर्ण भूमण्डल का भ्रमण करते हुए वीणा बजाते हुए भगवन्नाम कीर्तन करते हुए परमशुभ श्रीविदेह नगर में पधारे। दूर से आते हुए श्रीनारदजी को देख कर श्रीमिथिला नरेश श्रीविदेह महाराज खड़े हो गये तथा बड़े आदरभाव से उनकी अगवानी करके प्रेम पूर्वक महाराजाधिराज श्रीजनक ने श्रीनारदजी को अपने स्वर्णरचित सिंहासन पर विराजमान कराया। तथा पाद्य-अर्घ्य-आचमनादिक पूजा के उपचारों द्वारा प्रेम से पूजन वन्दन करके स्वस्थ शान्त चित्त हो जाने पर अत्यन्त विनय पूर्वक महाराज ने श्रीनारदजी से हाथ जोडकर पूछा- ॥ ५-६-७ ॥

भगवन्नारद ऋषे ! ब्रूह्युपायं मम प्रभो !
आदिशक्तेर्जगन्मातुर्यथा मे दर्शनं भवेत् ॥८॥
विदेहवचनं श्रुत्वा किञ्चिद् ध्यात्वा महामुनिः ।
प्रोवाच सस्मितं कृत्वा भाग्यवानसि भूपते ! ॥९॥
वशी संयमवान् भूत्वा 'श्रीं' बीजं जप सत्वरम् ।
सहस्रादित्य संकाशां चन्द्रकोटि सुशीतलाम् ॥१०॥
कन्दर्पकोटिलावण्यां सहस्रपदमस्तकाम् ।
चन्द्र सूर्याग्निनयनां भक्तानुग्रहतत्पराम् ॥११॥
सहस्रभुज संयुक्तां श्रीमत्यादिभिरर्चिताम् ।
एवं ध्यात्वा महामायां त्रिकोटि जप सत्वरम् ॥१२॥

हे भगवन् ! श्रीनारद ऋषीजी ! आज कृपा करके आदि शक्ति जगज्जननी का मुझको दर्शन हो जाय ऐसा कोई सरल उपाय आप बतलाइये ! श्रीविदेह महाराज का वचन सुनकर थोड़ीबार ध्यान करके महामुनि श्रीनारदजी हसते हुए कहने लगे कि महाराज ! आप धन्य हैं महान् भाग्यशाली हैं, देखिये आप आत्मेन्द्रियों को वश में रख कर संयम पूर्वक 'श्रीं' बीज-मन्त्र का तुरन्त जप प्रारम्भ कर दीजिये । तथा हजारों सूर्यों के समान तेजस्वी करोडों चन्द्रमा के समान सुशीतल करोडों कामदेव से सुन्दर हजारों मस्तक चरण भुजाओंसे सम्पन्न सूर्य-चन्द्र अग्नि जिनके नेत्र हैं ऐसी भक्तों पर परम अनुग्रह करने वाली श्रीमती देवियों द्वारा परमपूजित महामाया का हृदय में ध्यान करते हुए 'श्रीं' बीज का तीन करोड़ जप तुरन्त करिये (श्लोक ८ से १२)

अयोनिजाऽऽराधनेन तव पुत्री भविष्यति।
बाललीलाँ दर्शयित्वा राक्षसान्नाशयिष्यति ॥१३॥
पुराणपुरुषश्चापि तस्याः पतिरनुत्तमः।
अश्वमेधकृते राज्ञः पंक्तिरथ महात्मनः ॥१४॥
गृहेऽवतीर्य भगवान् महीभारं क्षयिष्यति।
इति श्रुत्वा महाबाहुर्विदेहः प्रीतिमानसः ॥१५॥

अयोनिजा आद्याशक्ति आराधन करने से तुम्हारी पुत्री हो जायेगी तथा बाललीलायें दिखाकर पश्चात् राक्षसों का विनाश करेगी। पुराण पुरुष प्रभु श्रीराम इनके पति बनेंगे। चक्रवर्ती महाराज श्रीदशरथजी के अश्वमेधयज्ञ करने पर उन महात्मा के घर भगवान् स्वयं अवतीर्ण होंगे तथा पृथिवी का भार हरण करेंगे। महाबाहु श्रीविदेह महाराज इस प्रकार से श्रीनारदजी का बचन सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुए (१३-१४-१५)

मन्त्रस्याराधनं चक्रे भक्तिभाव समन्वितः।
ततो जपे समाप्ते तु वागभूत्तदमानुषी ॥१६॥
स्वर्णलाङ्गलहस्तेन कृषतः क्षेत्रमुत्तमम्।
त्वया भूमेर्भविष्यामि राजन् याहि स्वमालये ॥१७॥
तत्रक्षेमं करिष्यामि भजमां भक्ति भावतः।
एतस्मिन्नन्तरे प्राप्ते रावणो लोकरावणः ॥१८॥
दण्डयत्यनिशं दुष्टो मुनीन्धर्मपरायणान्।
रुधिरं हि मुनीनां तु कुम्भे कृत्वा जहास ह ॥१९॥
तदा क्रुद्धा हि मुनयः शापं तस्मै समाददुः।

अस्माकं रुधिराज्जाता महामायेति पत्तने ॥२०॥
त्वदीये सङ्गता यह्नि तदा ते संक्षयः किल ।

श्रीनारदजी की आज्ञानुसार श्रीजनकजी ने भक्तिभावना सहित मन्त्रराज का आराधन किया, जप पूर्ण होने पर ऐसी देवी आकाशवाणी हुई, कि "हे राजन् ! स्वर्ण का हल बनाकर जब तुम यज्ञभूमि का शोधन करोगे तब उस परम उत्तम क्षेत्र में मैं पृथिवी से उत्पन्न होऊंगी । तुम अपने घर जाओ, तुम्हारा मनोरथ पूर्ण होगा, मैं तुम्हारा कल्याण करूंगी, तुम भक्ति भावना से मेरा भजन करो।"

इसी बीच में लोकों को रुलाने वाला रावण दुष्ट बुद्धि से सबको निरन्तर दण्डित करता हुआ धर्मपरायण मुनियों को भी दुःख देने लगा, तथा उनसे दण्ड रूप में उनका रुधिर एक घडे में रखकर हंसने लगा । उसकी उद्दण्डता देखकर मुनीश्वरों ने क्रोधित होकर श्राप दिया कि—"हमारे रुधिर से उत्पन्न महामाया जब तुम्हारे नगर में आवेंगी तब तुम्हारा विनाश हो जायेगा।" (श्लोक १६ से २०) ❀

❀ रावण संहिता में स्वयं रावण ने मेघनाद से कहा है कि "राजकर बिना दिये जो कुछ करता है वह अनिष्टकारक होता है अतः मैंने महर्षियों से उनकी तपस्या का फल कररूप में लिया। उनका वह संकल्प किया हुआ जल एक घडे में भरकर मैंने विदेह राज की भूमि में गडवा दिया था । जिससे १२ वर्ष अनावृष्टि हो गई तथा वृष्टि के लिये यज्ञभूमि शोधते समय सती शिरोमणि सीता जी प्रकट हुई ।

तदा शाप भयात् कुम्भं वैदेहे निचखान ह ॥२१॥
इति व्यतिक्रमाज्जोता मिथिलायाँ दशवार्षिकम् ।
अवर्षणं महासह्यं प्रजा तेनाभितेपिरे ॥२२॥
तदा विदेहो नृपतिः शतानन्दादि ब्राह्मणान् ।
समाहूयोवाच द्विजाः किं कर्तव्यं मयेति च ॥२३॥
अवर्षण निवृत्तौ हि उच्यतां द्विजसत्तमाः ।
स्वर्णलाङ्गलहस्तेन त्वयाकृष्टा महीभवेत् ॥२४॥
तदा यज्ञे कृते राजन् पर्जन्यो वर्षति ध्रुवम् ।
स ब्राह्मणानाँ वचनं श्रुत्वा राजर्षिसत्तमः ॥२५॥

तब श्राप के भय से रावण ने वह घडा विदेहराज की भूमि में गडवा दिया जिसके कारण मिथिला देश में दश वर्ष से वर्षा वरसी ही नहीं । महान् भयङ्कर अवर्षण से प्रजा ने महान् कष्ट पाया, तब विदेहराजा ने शतानन्दादिक ब्राह्मणों को बुलाकर पूछा इस अवर्षण (दुष्काल) की निवृत्ति के लिये हमको क्या करना चाहिये हे पूज्य ब्राह्मणों ! आप कोई उपाय बताइये । राजेन्द्र जनकजी की प्रार्थना सुनकर ब्राह्मणों ने कहा—"सोना का हल बनवाकर जब आप स्वयं पृथिवी जोतेगें तथा उस भूमि पर यज्ञ करेंगे तब अवश्यमेव वरसा वरसेगा ।" ब्राह्मणों का वचन सुनकर राजर्षियों में सर्वश्रेष्ठ श्रीजनकजी ने (श्लोक २१ से २५)

ओमित्युक्त्वा तथा चक्रे स्वर्णलाङ्गलमुत्तमम् ।
तच्चकर्ष यज्ञमहीं प्रीतियुक्तो नराधिपः ॥२६॥

लाङ्गलस्य तु सीतायाः कृषतः क्षेत्रमुत्तमम् ।
वैशाखे धवले नन्दे तिथौ जाता जगन्मयी ॥२७॥

सहस्रकोटि सूर्य्याभां राजा दृष्ट्वा मुमोद ह ।
तदा ब्रह्मादयो देवाः पुष्पवृष्टिं प्रचक्रिरे ॥२८॥
स्तुतिं चक्रुस्तदा देवाः विनयावनतकन्धराः ।

"आपकी आज्ञा शिरोधार्य है," ऐसा कह कर श्रीविदेहराजा ने सोने का हल बनवाया तथा स्वयं यज्ञभूमि को अत्यन्त प्रेम से नरेन्द्र श्रीजनकजी जोतने लगे, उस दिन वैशाख महीने के शुक्ल पक्ष की नवमी तिथि थी, मध्याह्न का समय था, उस समय जगन्मयी जगदम्बा श्रीसीताजी प्रकट हुईं, हजारों करोडों सूर्यों के समान कान्तिवाली उस महादेवी का दर्शन कर राजा श्रीजनकजी बडे प्रसन्न हुए, उस समय ब्रह्मादिक देवगणों ने पुष्पों की वृष्टि आकाश से वरसायी तथा सभी देवता मस्तक नमाकर बहुत विनयपूर्वक स्तुति करने लगे (श्लोक २६-२७-२८)

नमो नमो महामाये विश्वोत्पत्तिकरे शिवे ॥२९॥
निर्गुणे सर्वभूतेशि मातः शङ्करकामदे ।
त्वं भूमिः सर्वभूतानां प्राणः प्राणवतां तथा ॥३०॥
धीः श्रीः कान्तिः क्षमा शान्तिः श्रद्धा मेधा धृतिः स्मृतिः ।
उद्गीथे त्वर्द्धमात्रासि गायत्री व्याहृतिस्तथा ॥३१॥
जया च विजया धात्री लज्जा कीर्तिः स्पृहा दया ॥३२॥

विश्व की उत्पत्ति करने वाली कल्याणस्वरूपिणी हे महामाये ! आपको वारंवार नमस्कार है । हे प्राकृतगुणों से रहित

निगु'णे ! सर्वभूत प्राणियों की ईश्वरी, कल्याणप्रदकामनाओं की पूर्ति करने वाली आपको पुनः पुनः प्रणाम करते हैं। आप ही सभी भूत प्राणियों की आधार भूमि हैं, प्राणधारियों के आप ही प्राण हैं, आपही बुद्धि-लक्ष्मी-प्रभा-क्षमा-शान्ति-श्रद्धा-मेधा-धृति तथा स्मृति स्वरूप होकर संसार की शोभा बढाती हैं, उद्गीथ ब्रह्म विद्या तथा अर्धमात्रा चिदानन्दमयी आप ही हैं। आपकी गायत्री हैं तथा आप ही सप्त व्याहृति हैं। जयाविजया-विधात्री लज्जा-कीर्ति-स्पृहा तथा दया भी आप ही हैं (श्लोक २९ से ३२)

त्वां संस्तुमोऽम्ब भुवनत्रय संविधान —
दत्त्वा दयारसयुतां जननीं जनानाम् ।
विद्यां शिवां सकललोकहितां वरेण्यां—
श्री बीजवास निपुणां भवनाशकर्त्रीम् ॥३३॥

ब्रह्मा हरः शौरि सहस्रनेत्र वाग्वह्नि सूर्य भुवनाधिनाथाः ।
ते त्वत्कृता सन्ति ततो न मुख्या माता यतस्त्वं स्थिर
जङ्गमानाम् ॥३४॥

सकल भुवनमेतत्कर्तु कामा यदात्वं,
सृजसि जननि देवान् विष्णुरुद्राज मुख्यान् ।
स्थिति लय जननं तैः कारयस्यैक रूपां—
न खलु तव कथञ्चिद् देवि संसारलेशः ॥३५॥

हे अम्बे ! त्रिभुवन की व्यवस्था सुचारु रूप से चलाने के लिये अपने-जनों को आपने दयारस से परिपूर्ण जननी प्रदान की है ऐसी करुणामयी आपकी हम सब स्तुति करते हैं तथा सकल

जगत् का कल्याण करने के लिये सर्वलोक हितकारी विद्यास्वरूपिणी तरणीय श्रीं बीज में निवास करने में निपुण भवदुःख विनाश करने वाली हे माँ ! आपकी हम स्तुति करते हैं ॥ ब्रह्मा-शिव-विष्णु-इन्द्र-सरस्वती-अग्नि-सूर्यादिक त्रिभुवन के नाथ सभी आपके ही बनाये हुए हैं, अतः वे सब प्रधान पूज्य नहीं हैं क्योंकि आप ही सचराचर की जब एकमात्रा माता है तब आपसे श्रेष्ठ अन्य कौन हो सकता है ? हे मैया ! जब आप सम्पूर्ण भुवनों की रचना करना चाहती हो तब विष्णु-रुद्र-विधाता आदि देवताओं की सृष्टि करती हो तथा उनके द्वारा पालन-प्रलय-उत्पत्ति आदि कार्य करवाती हो किंतु आश्चर्य है कि यह सब करते कराते हुए भी हे देवि ! आपको संसार के वातावरण का लेशमात्र भी-स्पर्श नहीं होता है (३३-३४-३५)

न ते रूपं वेत्तुं सकल भुवने कोऽपि निपुणो—
न नाम्नां संख्या ते कथयितुमिह योग्योऽस्ति पुरुषः ।
यदल्पं दुर्ज्ञानं कलयितुमशक्तः स तु नरः—
कथं पारावाराकलनचतुरः स्याद् दुर्मतिः ॥३६॥

न देवानां मध्ये भगवति तवानन्त विभवं—
विजानन्त्येकोऽपि यत्कथञ्चिदपि भुवनैकासिजननी ।
कथं मिथ्या विश्वं सकलमपि चैकारचयसि—
प्रमाणं त्वेतस्मिन् निगमवचनं देवि ! विहितम् ॥३७॥

निरीहैवासित्वं निखिलजगकारणमपि सदा—
चरित्रं ते चित्रं भगवति मनो नो व्यथयति ।

कथं कारं वाच्यः निगमगुणप्रभावाऽतिनितरां—
स्वयं यस्मादेतत स्वयमपि न जानासि परमम् ॥३८॥

हे श्रीकिशोरीजू ! आपके स्वरूप को यथार्थ रूप से जानने में प्रवीण तो त्रिभुवन में कोई नहीं है तथा न तो आपके नामों की संख्या पूर्ण करने योग्य कोई पुरुष प्राप्त हो सकता है। जब कि एक छोटे से कुम्हार की कारीगरी का ज्ञान प्राप्त करने की भी मनुष्य को सामर्थ्य नहीं है तब आपकी अपरम्पार महिमा का पार पाने में कौन दुर्मति चतुर हो सकता है ? अर्थात् आपके नाम रूप-गुण अनन्त है उसका कोई थाह नहीं पा सकता है ॥३६॥ हे जननि ! देवाताओं के मध्य में भी आपके अनन्त वैभव को ठीक से जानने वाला तो कोई एक भी नहीं है परन्तु हे भगवती ! आप जब अखिल ब्रह्माण्ड की जननी हैं तब आपका यत्किञ्चत् भी ज्ञान प्राप्त करना हमारे जैसे अल्पज्ञों को दुर्लभ ही है। आश्चर्य है कि आप अकेली ही इस मिथ्या जगत् को रच कर परमसत्य बनाकर दिखा देती है, हम तो क्या जाने, परन्तु वेदों के वचन हो आपकी महिमा गाते हुए ऐसा कहते है, वही प्रबल प्रमाण है ॥३७॥ अखिल विश्व का कारण होते हुए भी आप उससे आशक्ति रहित सर्वथा निर्लेप ही रहती हो, आपका यह चरित्र हमारे मनको व्यथित कर देता है, निगमागमने आपके अतुलनीय प्रभाव का खूब वर्णन किया है परन्तु जब आप स्वयं ही अपनी महिमा का पूर्णरूप से नही जानती हो तब और जीवात्मा तो क्या जान सकता है ॥३८॥

अये किं वा सीते ! दुरिततमरेखा बलवती--
भवत्याः पादाब्जे भजननिपुणो क्वास्ति दुरितम् ।
उपेक्षा किं चेयं तव सुरसमूहेऽति विषमा--
यया पौलस्त्यस्य विमरण विलम्बः कृतवती ॥३९॥
पौलस्त्यनन्दनं मातर्जहि शीघ्रं दयानिधे !
येन वित्रासिता नष्टा गो-मही-सुर-भूसुराः ॥४०॥
प्रसंहर महामाये इदं रूपमलौकिकम् ।
विदेहं पितरं पश्य वात्सल्येन विभूषितम् ॥४१॥
प्रीणयैनं बाललीला विलासेन महीपतिम् ।
इति ब्रह्मगिरः श्रुत्वा बालिका तत्क्षणादभूत् ॥४२॥
ब्रह्मणो बोधनाद्राजा विदेहो हर्षमानसः ।
प्राप्य बोधं प्रतुष्टात्र सीतां भूमि समुद्भवाम् ॥४३॥

हे श्रीसीताजी ! हमारे दुर्भाग्य की महापापी रेखा कैसी प्रबल है तथा आपके भजन में परायण जीवों को पाप कहां से आया जो आप इन देवताओं की अभी तक उपेक्षा ही कर रहीं है, आप रावण के मरण में इतना विलम्ब क्यों करती है ? कुछ समझ में नहीं आता है ॥३९॥ पौलस्त्यनन्दन रावण को आप कृपा करके शीघ्र ही विनाश करें । जिसके द्वारा-गायें-पृथिवी देवता तथा ब्राह्मण अत्यन्त त्रस्त (पीडित) हो रहे हैं ॥४०॥ आप अपने इस दिव्य स्वरूप को अन्तर्ध्यान करें, श्रीविदेह महाराज को अपना पिता मानकर स्वीकार करें, उनके वात्सल्य रस विभू-षित हृदय के भाव को प्रेमपूर्वक देखिये ॥४१॥ बाललीला के

विलास से विदेहमहाराज को प्रसन्न करे। ऐसी ब्रह्माजी की प्रार्थना सुनकर श्रीसीताजी तुरन्त नन्हीं सी बालिका बन गयीं, ब्रह्माजी के समझाने पर श्रीविदेह महाराज का हृदय आनन्द से भर गया। तथा जगदम्बा का रहस्य ज्ञान प्राप्त कर आप भूमि से उत्पन्न हुई। श्रीसीताजी को प्रार्थना द्वारा प्रसन्न करने लगे ॥४३॥

श्रीविदेह-उवाच—

ते ब्रह्मराज्ञि कलिकर्म विनाशयन्ति—
वृन्दासु संहतिषु शर्म विकाशयन्ति।
ज्ञानामृतानि हृदयेषु समर्पयन्ति—
ये तावकीन पदपङ्कजमर्चयन्ति ॥४४॥

ते ब्रह्मराज्ञि कुलकीर्तिमुदञ्चयन्ति—
दिक्षुः प्रतापपटलीमवतंसयन्ति।
विद्या परिस्कृतजनानपि मूकयन्ति—
येऽन्तः सदैव भवतीमधिवासयन्ति ॥४५॥

ते ब्रह्मराज्ञि भुवनानि वशं नयन्ति—
दुःखान्धकार पटलानि विपाटयन्ति।
सृष्टिं नृपेन्द्रमुकुटे विनिवेशयन्ति—
ये त्वामसीमकरुणानिधिमाश्रयन्ति ॥४६॥

ते ब्रह्मराज्ञि कवितामृतमूर्जयन्ति—
संस्तुत्यवादनिपुणानपि तर्जयन्ति।
कामादि कर्कशरिपून्परिमार्जयन्ति—
ये तावकस्मरणा सौभगमर्जयन्ति ॥४७॥

श्रीविदेह महाराज प्रार्थना करते हुए बोले, हे परब्रह्म प्रभु की पटरानी ! वे कलिके कुकर्मों का विनाश कर देते हैं, देवताओं के सङ्घ का कल्याण विकसित करते हैं, मनुष्यों के मन में ज्ञानामृत भर देते हैं जो आपके श्रीचरण कमलों की उपासना करते हैं ॥४४॥ हे परब्रह्म प्रभु श्रीराम की महारानी ! वे अपने कुलकी कीर्ति का विस्तार करते हैं, दशों दिशाओं को अपने प्रताप से प्रभावित करते हैं, चुने-चुनाये विद्वानों को भी शास्त्रार्थ में मौनी बना देते हैं, (चुप कर देते हैं) जो सदैव अपने अन्तःकरण में आपको विराजमान रखते हैं ॥४५॥ हे परब्रह्म की महारानी ! जो असीम करुणासागर आपका आश्रय लेते हैं वे सभी भुवनों को अपने वश में कर लेते हैं, दुःख के अन्धकारमय वातावरण को विदीर्ण कर देते हैं तथा समस्त संसार को राजराजेन्द्र प्रभु श्रीराम के श्री चरणों में झुका देते हैं ॥४६॥ हे ब्रह्म की पटरानी ! जो आपके श्रीचरणारविन्द के स्मरण का सौभाग्य उपार्जन कर लेते हैं वे कवितारूपी अमृत की धारा प्रवाहित करते हैं बड़े-बड़े प्रशंसनीय तार्किक शिरोमणि विद्वानों को भी विवाद में (डांट) फटकार देते हैं। कामादिक कठोर शत्रुओं का भी निवारण कर देते हैं ॥४७॥

ते ब्रह्मराशि कलिसम्पद् मर्दयन्ति-
दुर्वासनान्धतमसानि विमर्दयन्ति ।
कारुण्यसार जगतीं प्रपवित्रयन्ति-
ये श्रीमतीं हृदयवेशमनि चित्रयन्ति ॥४८॥

ते ब्रह्मराज्ञि सुखशक्ति मदश्नयन्ति—
विद्याकलापि कृषिमतुलामर्जयन्ति ।

देशान्तरेषु चरितान्य वरोपयन्ति—
ये सर्वधाम तवनाम निरूपयन्ति ॥४६॥

ते ब्रह्मराज्ञि कुकृतानि निकृन्तयन्ति—
संसारदुःख निगडानि विभञ्जयन्ति ।

शान्ति परामपि मनः परिचारयन्ति—
ये त्वत्कथामृतरसं हृदि धारयन्ति ॥५०॥

ते सीतेन्दीवराभे भवभयजलधिं शीघ्रमुल्लङ्घयन्ति—
पश्चातस्स्वर्गापवर्गौ निखिलसुखकुलोल्लासमासादयन्ति ।
फुल्लन्मल्लीमतल्ली प्रतिभट सुषमे हर्षमुत्कर्षयन्ति—
श्रीमातः संततं येतवभजनविधौ चित्तमायोजयन्ति ॥५१॥

हे ब्रह्मराज्ञी ! जो आपकी श्रीमती छबि का चित्र अपने हृदय मन्दिर में चित्रित कर लेते हैं वे कलिकाल की आसुरी सम्पत्ति को कुचल देते हैं, दुर्वासना रूपी अन्धकार का विनाश कर देते हैं तथा अपनी करुणा सरस भावना से भूतल को परम पवित्र बना देते हैं ॥४८॥ हे परब्रह्म श्रीराम की पटरानी ! जो सर्वसुखधाम आपके नाम का निरूपण करते हैं वे सभी प्रकार की सुखसम्पत्ति का भंडार भर लेते हैं, विद्या-कलायें तथा खेती-बाडी का अतुलधन उपार्जन कर लेते हैं एवं देश देशान्तरों में उनके प्रशंसनीय चरित्रों का यशोगान होता है । हे ब्रह्म की महारानी ! जो आपके कथारूपी अमृतरस का हृदय में धारण

करते हैं वे सभी कुकर्मों का निकन्दन कर देते हैं संसार की दुःखप्रद बेड़ियों को तोड देते हैं तथा परम शान्ति से मन को भरपूर कर लेते हैं ॥५०॥ कमल के समान परम सुन्दरी हे श्री सीते ! जो आपके भजन के विधान में अपने चित्त को लगा लेते हैं वे महाभयङ्कर भवसागर को शीघ्र लांघ जाते हैं अत्यन्त प्रसन्न प्रफुल्लित मालती चमेली की शोभा सुन्दरता का भी आनन्द बढाकर उसको उत्कृष्ट बना देते हैं तथा सम्पूर्ण सुखों के कुल को उल्लासित करने वाली सुनहले कमल के समान वर्णवाली कमला को भी आनन्दित करते हैं ॥५१॥

इति स्तुताजगन्माता सीता साक्षात्परेश्वरी ।
विदेहस्य गृहे स्थित्वा बाललीलां चकार ह ॥५२॥
समाप्य यज्ञं राजाऽपि सानन्दो गृहमागतः ।
सुनयनां च समाहूय पुत्रीयं गृह्यतामिति ॥५३॥
साऽपि तां स्वाङ्गजां मत्वा सेवां चक्रे यथाविधिः ।
प्रजातीर्थे स राजाऽपि ददौ दानान्यनेकशः ॥५४॥
गो-भू-हिरण्यं-ग्रामांश्च तथा गजरथा वहुः ।
प्रजाश्चापि सुखं प्रापुः राजा राज्ञी च नागराः ॥५५॥

इस प्रकार साक्षात् परमेश्वरी जगन्माता श्रीसीताजी स्तुति सुनकर श्रीविदेह महाराज के घर में निवास कर बाललीला करने लगी श्रीविदेहराज यज्ञ समाप्त कर आनन्दपूर्वक घर आये तथा महारानी श्रीसुनयनाजी को बुलाकर "ये आपकी पुत्री है इस कन्या को ग्रहण करिये" ऐसा कह कर उनकी गोद में सीताजी

को प्रदान किया श्रीसुनयनाजी भी अपनी ही औरस पुत्री मान कर बडे प्रेम से विधिपूर्वक उनकी सेवा करने लगीं। राजा ने भी प्रजातीर्थ का महत्व जानकर गायें-पृथिवी-सोना-गांव-हाथी रथ आदि बहुत से सामग्री अपनी प्रजा में लुटाया। इस श्री जानकी जन्म महोत्सव के आनन्द में राजारानी तीर्थ तथा श्रीजनकपुर धाम निवासी परम प्रसन्न हुए।

गते पञ्चदशे वर्षे विश्वामित्रेण सङ्गतः।
रामः स्वयम्वरे प्राप्य सीतां हर्ष समागतः ॥५६॥
अयोध्यां सीतया सार्द्धं सम्प्राप्त प्रीतिमानसः।
द्वादशाब्दे गते वीरः कैकेय्याः वचने स्थितः ॥५७॥
दण्डकारण्यगमनं चक्रे भार्य्याऽनुजेन च।
तत्र मायामयीं सीतां रावणः कालप्रेरितः ॥५८॥
जहार मृगयां जाते श्रीरामे लक्ष्मणे तथा।
ऋष्यमूकं ततः प्राप्य सुग्रीवेण समागतः ॥५९॥
रामः सुग्रीवयोः सख्यं जातं परमपावनम्।
ततः सुग्रीव सहितो गत्वा तीरं महोदधेः ॥६०॥
समुद्रं क्षोभयामास शरैरादित्य सन्निभैः।
समुद्रवचनाच्चैव नलः सेतुमकारयत् ॥६१॥
तेन गत्वा पुरीं लङ्कां हत्वा रावणमाहवे।
अयोध्यां प्रस्थितोऽप्यासीत् सीतया लक्ष्मणेन च।
अजरा विज्वरा जाता धेनवश्च महीसुराः।
इत्थं सीताप्रभावेण जगत्स्वस्थं बभूव ह ॥६२॥

शक्त्या विहीनो रामोऽपि किञ्चित् कर्तुं क्षमो नहि ।
तस्माच्छक्त्याश्रयं विश्वं जानीहि ऋषि सत्तमाः ॥६४॥

तत्पश्चात् श्रीराम पन्द्रह वर्ष के हुए तब श्रीविश्वामित्रजी के साथ जनकपुर गये-स्वयंबर हुआ । श्रीअयोध्याजी में १२ वर्ष रहे-बन गये-रावण मारा पुनः श्रीअवध आये इत्यादि सभी लीलायें श्रीसीताजी के साथ ही उन्हीं की शक्ति से हुई हैं देव-ब्राह्मण सन्त-साधु-गौ-पृथिवी सभी जगत् स्वस्थ हुआ यह श्रीसीताजी का ही प्रभाव है शक्ति के बिना श्रीरामजी भी कुछ करने में समर्थ नहीं होते हैं इसलिये हे महात्माओं श्रीजानकीजी आद्याशक्ति महाशक्ति का आश्रय लेना ही उत्तम है (श्लोक ५६ से ६४)

श्रीसूत-उवाच—

अथ पूजा विधि वक्ष्ये शृणुध्वं मुनि पुङ्गवाः ।
त्रिकोणं षट्कोणञ्च तथाष्टदल पङ्कजम् ॥६५॥
ततः षोडशपत्राढ्यं भूपुरैस्त्रिभिरन्वितम् ।
यन्त्रं विधाय तत्पीठे विमलाद्याः प्रपूजयेत् ॥६६॥
ततोध्यायेन्महामायां सीतां कारण कारणाम् ।
इषद्धास्य प्रसन्नास्यां भक्तानुग्रहकातराम् ॥६७॥
सुवर्णवर्णां सुमुखीं पीताम्बरविभूषिताम् ।
कुमारीभिर्वयस्याभि सेवितां चलकुण्डलाम् ॥६८॥
पद्मासने समासीनां भजेत्सीतां निरन्तरम् ।

हे मुनीश्वर महात्माओ ! अब मैं श्रीसीताजी के पूजन की विधि वर्णन करता हूँ आप सब एकाग्रचित्त से श्रवण करिये । पहले

एक पात्र में अथवा तामा के पत्र पर मध्य में त्रिकोण लिखे उसके बाद षट्कोण लिखे तब उसके बाहर अष्टदल कमल बनावे उसके पश्चात् षोडश दल कमल बनावे फिर तीन भूपुर रेखाओं से उसको अलङ्कृत करे उसमें विमलादिक शक्तिओं का पूजन करे मध्य में महामाया कारणों की भी महाकारण श्रीसीताजी का ध्यान करे। जो प्रसन्न वदन मन्द-मन्द मुसकाती हैं भक्तों पर अनुग्रह करने के लिये आतुर रहती हैं जो सोने के समान गौर-वर्ण है सुन्दर मुखारविन्द वाली है पीताम्बर पहने हुए हैं अपनी सखी सहेली कुमारिकाओं द्वारा सुसेवित है कानों में कुण्डल हिल रहे हैं पद्मासन से विराजमान है ऐसी श्रीसीताजी का निरन्तर भजन करना चाहिये (श्लोक ६५ से ६८)

एवं ध्यात्वा त्रिकोणे तां स्थाप्य साधकसत्तमः ॥६९॥
षोडशैरुपचारैश्च पूजयेद् बुद्धिमन्नारः ॥
षट्कोणेषु षडङ्गानि पूजयेद् ऋषिसत्तमाः ॥७०॥
श्रीमती-सुमती-नन्दा-भद्रा-चन्द्रकलाभिधा।
सुभद्रिका-भद्रशीला-सुशीला चाष्टपत्रके ॥७१॥
सम्पूज्या पत्रकस्याग्रे क्रमाच्छृणुत सत्तमाः।
संविज्ञाना-महाज्ञाना-ज्ञाना च शुभशालिनी ॥७२॥
सम्पन्ना सुमुखी-श्यामा-मदनालसगामिनी।
पुनर्दले षोडशके पूज्याः शृणुत सत्तमाः ॥७३॥
तासां नामानि वक्ष्यामि महापुण्य प्रदानि च।
कराली-विकराली च तथोमा च सरस्वती ॥७४॥

श्री-दुर्गा तथा लक्ष्मी-श्रुतिः प्रीतिः स्मृतिः धृतिः ।
श्रद्धा-मेधा-मतिः कान्तिरार्य्या एताः प्रपूजयेत् ॥७५॥

इस प्रकार ध्यान कर त्रिकोण के मध्ययन्त्र में श्रीसीताजी की साधकोत्तम स्थापना करे तथा बुद्धिमान् मनुष्य षोडशोपचारों से विधिपूर्वक उनका प्रेम से पूजन करे। हे ऋषिवर्य्यो ! षट्कोण में मन्त्रराज के छ अक्षरों को श्रीजू का अङ्गमान कर पूजन करे। पुनः अष्टदल कमल में श्रीमती १ सुमती २ नन्दा ३ भद्रा ४ चन्द्रकला ५ सुभद्रिका ६ भद्रशीला ७ तथा सुशीला ८ इनकी अष्टदल पर पूजा करे। तथा अष्टदलों के मध्य पत्र के अग्रभाग पर पूजनीय देवियों के नाम हे मुनीश्वरों ! प्रेम से सुनिये— संविज्ञाना १ महाज्ञाना २ ज्ञाना ३ शुभशालिनी ४ सम्पन्ना ५ सुमुखी ६ श्यामा ७ तथा मदनालसगामिनी ८ इनका भक्ति पूर्वक पूजन करे। हे ऋषी वर्य्यो ! पुनः षोडशदल पर पूजनीय महा-पुण्यप्रदायिनी शक्तियों का नाम सुनाता हूँ। आप सब श्रद्धापूर्वक सुनिये—कराली १ विकराली १ उमा ३ सरस्वती ४ श्री ५ दुर्गा ६ लक्ष्मी ७ श्रुति ८ प्रीति ९ स्मृति १० धृति ११ श्रद्धा १२ मेधा १३ मति १४ कान्ति १५ आर्य्या १६ इनकी पूजा करे (श्लोक ६९ से ७५)

चतुर्द्वारे गणपतिः क्षेत्रपं योगिनीं तथा ।
वटुकं पूजयेत् पश्चाद् हर्षनिर्भर मानसः ॥७६॥
रेखासु पूजयेत् पश्चादिन्द्रवज्रादि दिग्गजान् ।
एवं पूजा विधिं कुर्य्याद् व्रती सम्यग् विधानतः ॥७७॥

श्रीसीतानवमीं प्राप्य ये भुञ्जन्ति नराधमाः ।
ते प्रेत्य नरकं यान्ति कालसूत्रादिकं परम् ॥७८॥
संयमी नवमीं प्राप्य यो कुर्य्याद् व्रतमुत्तमम् ।
अष्टोत्तर कुलशतं तस्य याति हरेः पदम् ॥७९॥
नास्ति सरयू समं तीर्थं नास्ति पूज्यो गुरुः समः ।
नास्ति माता समान्यस्तु न तिथिर्नवमी समा ॥८०॥
स व्रती स च पुण्यात्मा स ज्ञानी स जितेन्द्रियः ।
यो सीता नवमीं प्राप्य व्रतं कुर्य्यान्महामतिः ॥८१॥
नन्दति पितराः सर्वे मातृ मातामहादयः ।
धन्या वयं हि मद्वंशे श्रीनवमी ह्युपोषिता ॥८२॥
यः पठेत् पाठयेद्वापि शृणोति श्रावयेदपि ।
सीताजन्मकथां धीमान् मुक्तिभाग् भवति ध्रुवम् ॥८३॥

इति श्रीभुवनेश्वर संहितायाः पराविद्या प्रस्तावे पूजाखण्डे श्रीसीताजन्मकथा पूजाविधि कथनंनाम द्वादशोऽध्यायः ॥१२॥

चारों द्वार पर गणपति-क्षेत्रपाल-योगिनी तथा बटुक का आनन्दोल्लास पूर्वक पूजन करे। रेखाओं पर इन्द्रादि दशदिग्पालों के आयुध वज्रादिक का पूजन करे। व्रत करने वाला इस प्रकार विधि पूर्वक भलीभांति पूजन करे। श्रीसीतानवमी आने पर भी जो अधममनुष्य अन्न भोजन करता है वह मरने के पश्चात् काल-सूत्र आदि घोरनरक में जाता है। जो श्रीजानकीनवमी का संयम पूर्वक व्रत करता है उसके एकसौ आठ कुलपरम्परा के पूर्वज प्रभु के परमधाम में जाते हैं। श्रीसरयूजी के समान कोई तीर्थ

नहीं है, श्रीसद्गुरु के समान कोई पूज्य नहीं है माता के समान कोई सम्माननीय नहीं है। तथा श्रीनवमी के समान कोई तिथि नहीं है। वही महान् व्रती है, वही महान् पुण्यात्मा है वही महान् ज्ञानी है वही महान् जितेन्द्रिय है तथा जिसने श्रीसीता जन्मनवमी आने पर व्रत कर लिया वही महान् बुद्धिमान् है। माता-मातामह-पिता-पितामह सभी पूर्वज अत्यन्त प्रसन्न होते हैं तथा कहते हैं कि हम सब धन्य हैं जो हमारे वंश में श्री जानकीनवमी का व्रतकथा करने वाला उत्पन्न हुआ है। यह श्रीसीताजन्म व्रतकथा को जो पढ़ता है, पढ़ाता है, सुनता है, सुनाता है वह निश्चय ही मुक्तिपद प्राप्त करने का भागीदार (हकदार) हो जाता है (श्लोक ७६ से ८३)

यह श्रीभुवनेश्वर संहिता के पराविद्या-प्रस्तावक पूजाखण्ड के अन्तर्गत "श्रीसीताजन्म व्रतकथा" वर्णन नाम बारहवां अध्याय सम्पूर्ण हुआ ॥१२॥

॥ श्रीजानकीनवमी व्रत ॥

* माहात्म्य कथा *

श्रीसूत-उवाच–

पुनरग्रे प्रवक्ष्यामि शृणुध्वं मुनिसत्तमाः ।
इतिहासं महापुण्यं सीतामाहात्म्य सूचकम् ॥१॥
मरूदेशे द्विजश्चासीद् वेदवेदाङ्गपारगः ।
देवदत्तरितिख्यातो बुद्धिमान् द्विजपुङ्गवः ॥२॥
शोभना नामतस्यासीद् भार्यारूपेण गर्विता ।
सद्विजो वृत्तिसंकोचाद् देशदेशान्तरं गतः ॥३॥
ब्राह्मणः तस्य भार्या हि कामचाराति लम्पटा ।
शूद्रे विद्युन् नामधेये भार्याभावेन सङ्गता ॥४॥
शूद्र मैथुनयोगेन गर्भयुक्ता बभूव ह ।
तदा लोकभयाद् दुष्टा गर्भनाशं चकार सा ॥५॥
ग्रामस्था तां विनिन्दन्तः कथयन्तः परस्परम् ।
अरे, ब्राह्मणीत्वं भूत्वा कृतंकर्म विगर्हितम् ॥६॥
अतः त्वं नरके घोरे पतिस्यति न संशय ः।
इति लोकाद्बहुमुखाद्श्रुत्वा ग्रामंददाह सा ॥७॥
चपला दुष्टचित्ता च क्रोधाविष्टा कुकर्मिणी ।

कालान्तरे त्यक्तदेहे श्वपचे जन्म प्राप च ॥८॥
पतित्यागाच्चागलत्कुष्ठाच्चाग्नि प्रदाहनात् ।
ग्रामस्य गर्भघाताच्च अन्धाजाता स्वकर्मणा ॥९॥

श्रीसूत पुराणी ने कहा—हे श्रेष्ठ सन्तजनों ! मैं पुनः आगे श्रीसीताजी की महिमा का सूचक महान् पवित्र इतिहास कहता हूं उसको आप सुनिये। मारवाड में एक वेदवेदाङ्ग पारङ्गत देवदत्त नाम का एक विद्वान्-बुद्धिमान्-श्रेष्ठ ब्राह्मण रहता था। उसकी भार्या का नाम शोभना था उसके अपने सौन्दर्य का बडा घमंड था। ब्राह्मण जीविका निर्वाह का साधन अपने गाँव में न होने से देशान्तर में चला गया। इधर उसकी ब्राह्मणी काम-लम्पटा होने से "विद्युत" नाम के एक शूद्र के साथ फंस गई उसके साथ व्यभिचार करने से उसको गर्भ रह गया लोकों के भय से उस दुष्टा ने गर्भपात करवाया, गांव के लोग उसकी निन्दा करते हुए परस्पर कहते थे कि "अरे, ब्राह्मणी होकर तुमने ऐसा निन्दनीय काम किया, तुम निश्चय ही नरक में जाओगी इसमें कोई शंका नहीं है। इस प्रकार बहुत से लोगों के मुख से अप-वाद सुनकर उस दुष्टा ने गांव में आग लगा दी, अत्यन्त दुष्टचित्त वाली महाचञ्चला क्रोध में भरी हुई कुकर्म करने वाली समय पाकर मर गई तो चाण्डाल के घर में उसका जन्म हुआ। पति देव का त्याग करने से चण्डाली हुई ग्राम जलाने से उसको गलित कुष्ठ हो गया तथा गर्भपात करने से अन्धी हो गई, अपने कर्म का फल उसको अपने ही भोगना पड़ा (श्लोक १ से ९)

एवं स्वकर्मणो योगात् दुःखिता प्रतिवासरम् ।
दुःखेन भ्रममाणा सा देशाद् देशान्तरं गता ॥१०॥
कदाचिद् दैवयोगाद्धि कोशलां प्राप दुःखिता ।
मासे:माधव संज्ञ के शुक्ले नन्दा तिथौ युते ॥११॥

या सीतानवमी ख्याता पापसङ्घ विदारिणी ।
तद्दिने हि अयोध्यायां सा तु याचनतत्परा ॥१२॥
दुःखिताऽहं दुर्भगाऽहं भोज्यं देहि कृपालवः ।
अभितो याचमाना सा प्राप्ता कनक मण्डपे ॥१३॥

चम्पकाऽशोक बकुलः केतकीवन मध्यगे ।
यूथिका स्थल पद्मैश्च मन्दारैश्च सुशोभिते ॥१४॥
मणिस्तंभ सहस्रैश्च शोभिते भवने शुभे ।
संविष्टा द्वारदेशे सा याचना तत्परा सती ॥१५॥

इस प्रकार अपने कर्म के योग से दिन-प्रतिदिन अत्यन्त दुःख भोगती हुई वह देश देशान्तर में भटकती थी, एकबार किसी दैवयोग से वह दुःखियारी श्रीकोशलपुरी में आई संयोगवश उस दिन वैशाख महीने के शुक्लपक्ष की नवमी तिथि थी, जो सभी पापों के समूहों को नाश करने वाली श्रीजानकी नवमी के नाम से प्रख्यात है। उस दिन भीख मांगती हुई चिल्ला रही थी, हे कृपालु सज्जनो ! मैं बडी दुखी हूं, महा अभागी हूं, मैं भूख से मर रही हूं मुझे कुछ खाने के लिये भोजन दीजिये। ऐसे चारों ओर गली-गली भीख मांगती हुई वह श्रीकनक भवन में आई, जिसके चारों ओर चम्पा-अशोक-मौरछली-केवडा आदि

सुगन्धित पुष्पों के पेड़ थे, उसके मध्य में एक हजार स्तम्भ का मणिमण्डप था, वह भीख मांगती हुई एक दरवाजे से उसी में प्रवेश कर गई (श्लोक १० से १५)

क्षुत्तृष्णा व्याकुलायै मे देह्यन्नं भोजनाय च ।
पूजाभाण्ड मार्जकश्च साधुः कश्चित् समागतः ॥१६॥
श्रीसीतानवमी दुष्टे भोज्यदाने च पातकम् ।
तस्मादन्नं न दास्यामि याहि मा याचनं कुरु ॥१७॥
श्वः पर्वणि दिवसे दास्यामि भोजनं शुभम् ।
तच्छ्रुत्वाऽपि च सा दुष्टा न याचना पराङ्मुखी ॥१७॥
तदा साधुश्च रुष्टः सन् निर्माल्यं पूजनस्य च ।
तत्र पुष्पादिकं सर्वं मस्तके क्षिप्य चोक्तवान् ॥१९॥
इमानि पत्र पुष्पाणि भुंक्ष्व पुष्टे सुदुर्भगे ।
अन्नं प्रदद्यात्कः तेऽद्य सीताजन्म तिथौकृती ॥२०॥
ततो निराशा पापा सा चम्पकाख्या मृताभवत् ।
सीता कृपामयी देवी ह्यज्ञात व्रतचर्यया ॥२१॥
पापादुद्धारयामास कृपापुष्टा महेश्वरी ।
व्रत प्रभावतसा स्वर्गे उवास कतिचित्समाः ॥२२॥

"मैं भूख-प्यास से व्याकुल होकर मर रही हूं मुझे भोजन करने के लिये अन्न दीजिये।" ऐसा कह रही थी उसके ऐसे वचन पूजा के वर्त्तन पारषद माजने वाले वहां आये हुए किसी साधु ने सुने, उसने कहा हे दुष्टे ! आज तो श्रीसीतानवमी है भोजन में अन्न देने वाले को पाप लगता है, इसलिये मैं आज तो

अन्न नहीं दूंगा, चली जा, कल्ह पारण के समय आना सुन्दर पवित्र भोजन कराऊँगा। ऐसा समझाने पर भी उस दुष्टा ने कुछ भी नहीं माना, वह भीख मांगती ही रह गई उसने भीख मांगना नहीं छोड़ा, तब साधु उस पर रुष्ट हो गया पूजा के फूल-तुलसी जल जो उन बर्तनों में था उसके सिर पर डालकर कहने लगा कि दुष्टे ! जब हमारी बात नहीं मानती है तो ये पत्रपुष्प खा ले। आज श्रीजानकीनवमी को अन्न कौन देगा ? इससे निराश होकर वह पापिनी चम्पका भूखे मर गई। इस अनजान में श्रीसीता नवमी का व्रत हो जाने से परमकृपालु श्रीसीतादेवी उस पर प्रसन्न हो गई तथा कृपा से परिपूर्ण महेश्वरी श्रीसीताजी ने उसका पापों से उद्धार कर दिया। व्रत के प्रभाव से वह स्वर्ग में कई वर्षों तक जाकर आनन्द से रही (श्लोक १६ से २२)

पश्चात् सा कामरूपस्य राज्ञः राज्ञी बभूव ह।
जयसिंहस्य नृपतेः नाम्ना कामकलाभिधा ॥२३॥
पूर्वजन्मस्मरा साध्वी ग्रामे-ग्रामे पुरे-पुरे।
जानकी रघुनाथस्य मन्दिराणि चकार ह ॥२४॥
जानकीनवमीं प्राप्य प्रतिवर्ष महोत्सवम्।
पूजनं च व्रतं चक्रे सीतामुद्दिश्य ब्राह्मणान् ॥२५॥
साधूंश्च भोजयामास हर्षयुक्तेन चेतसा।
गोदानं-भूमिदानञ्च गजानश्वान् रथांस्तथा ॥२६॥
अन्ते स्व पतिना सार्द्धं साकेतं प्राप्यसत्त्वरम्।
सच्चिदानन्द श्रीरामरूपेमग्ना बभूव सा ॥२७॥

इति श्री भुवनेश्वर संहितायां श्रीजानकीनवमी व्रत माहात्म्य वर्णनो नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥

तत्पश्चात् वह कामरूप देश के महाराजा जयसिंह की महारानी कामकला नाम से प्रख्यात हुई। वह पूर्व जातिस्मरा महान् साध्वी होकर उसने अपने राज्य के प्रत्येक ग्राम में प्रत्येक नगर नगर में श्रीजानकीरघुनाथजी के मन्दिर बनवाये तथा प्रतिवर्ष श्रीजानकीनवमी पर श्रीजानकीजी को महापूजा-व्रत-उत्सव-कीर्तन भजन-तथा दूसरे दिन श्रीजानकीजी की प्रसन्नता कृपा प्राप्ति के उद्देश्य से साधु-ब्राह्मणों को भोजन बडे आनन्द से कराती थी, गोदान-अन्नदान-भूमिदान-हाथी-घोडा तथा रथ-का दान करती थी, जीवन पर्यन्त श्रीसीतारामजी की भक्ति करके अन्त में अपने पतिदेव के साथ ही प्रभु के परम धाम श्रीसाकेत में गई वहां सच्चिदानन्द परब्रह्म प्रभु श्रीराम के स्वरूपामृत सागर में निमग्न हो गई (श्लोक २३ से २७)

"यह श्रीभुवनेश्वर संहिता का "श्रीजानकीनवमी व्रतकथा" वर्णनात्मक तेरहवाँ अध्याय सम्पूर्ण हुआ।"

❀ अथ चतुर्दशोऽध्यायः ❀

श्रीसूत-उवाच-

पुनश्चान्यत्प्रवक्ष्यामि सीताभक्तकथानकम् ।
यस्य श्रवणमात्रेण जगन्माता प्रसीदति ॥१॥
शोणितनगराभ्यासे चानन्दनाम ग्राम के ।
ब्राह्मणः श्रुतिवेत्ता च स्मृतिमार्ग प्रवर्त्तकः ॥२॥

गुणसागर नाम्ना च प्रसिद्ध तपसां निधिः ।
सीताध्यान समायुक्तः सीतापादार्चने रतः ॥३॥

श्रीसीतायाः मन्त्रजापे चाहर्निशि परायणः ।
मन्त्रार्चायाति निपुणो योगियोगविदाम्वरः ॥४॥

श्रीसूत पौराणिकजी कहते हैं कि हेमहर्षियों ! मैं पुनः अन्य एक श्रीसीता भक्त का कथानक सुनता हूं । जिसके श्रवण करने से जगन्माता श्रीजानकीजी प्रसन्न हो जाती है । शोणित नामक नगर के पास एक आनन्द नाम का ग्राम था उसमें सकलश्रुति शास्त्र पारङ्गत स्मृति मार्ग के धर्मशास्त्रों के प्रवर्त्तक "गुणसागर" नाम के एक प्रसिद्ध तपोनिधि पवित्र ब्राह्मण रहते थे । श्रीसीता जी का ध्यान धग्न। श्रीसीताजी के चरणारविन्दों का पूजन करना, श्रीसीतामन्त्र का जप करना, रातदिन मन्त्रार्चन में प्रवीण योगतत्त्व के जानने वालों में परमश्रेष्ठ ब्राह्मण ऐसे अपना परम पवित्र जीवन व्यतीत करते थे (श्लोक १ से ४)

अर्चाध्यानं जपं वीक्ष्य दुष्टानगरवासिनः ।
बकूवद् ध्यायते यस्माद् बकोऽयमिति वादिनः ॥५॥
दुर्वाचां वाचयन्ति च ताडयन्ति न वक्ति चेत् ।
शिरोधूलि वर्षयन्ति हसन्ति दूरतः स्थिताः ॥६॥

ब्राह्मणोऽपि सपत्नीकः सीताध्यान परायणः ।
मन्यमानो स्वकं भाग्यं न शोचति न हस्यति ॥७॥
खलानां मशकानां च स्वभावस्त्यैव निश्चयः ।
हानिःका मे च दुष्टानामुत्पाते कोटिशः कृते ॥८॥

कस्मिंश्चित् समये सीतामाताऽस्मान् पालयिस्यति ।
इति भार्यां समाश्वस्य पुनरर्चां समारभे ॥९॥

उनका अर्चन-पूजन-ध्यान तथा जप में एकाग्रता देखकर नगर के कुछ दुष्ट लोग उन्हें बड़ा कष्ट देते थे, कहते थे देखो न बगुला जैसा ध्यान लगाया है ये तो बगुला भगत है । जब ब्राह्मण कुछ बोलते नहीं थे तब दुष्ट लोग दुष्टवाणी बोलकर मारते भी थे शिर पर धूल डालते थे, ताली पीटकर दूर-दूर से हंसते भी थे. ब्राह्मण अपनी धर्मपत्नी के साथ श्रीसीताजी के ध्यान में निमग्न रहते थे, अपने भाग्य का फल मानकर न चिन्ता करते थे न शोक करते थे न प्रसन्न होते थे, अपनी धर्मपत्नी को शान्त चित्त से समझाते थे, देवि ! खलों का तथा मच्छरों का ऐसा स्वभाव ही होता है इससे हमारी क्या हानि है ? दुष्टों के करोड़ों उत्पात श्रीजानकीजी के श्रीचरणारविन्दों की प्रीति से हमको नहीं हटा सकते हैं, किसी समय वह परम करुणामयी श्रीजानकीजी हमारी रक्षा करेंगी ही, इस प्रकार अपनी भार्य्या को आश्वासन देकर वे पुनः पूजन भजन आरम्भ कर देते थे (श्लोक ५ से ९)

ततश्च नवमी तिथिं सम्प्राप्ते ब्राह्मण सुधीः ।
आनर्चानेकविधिना सम्यग् विधि विधानतः ॥१०॥
ततश्च पूजावसरे समायाता कुबुद्धयः ।
धूलिनां प्रस्तराणाञ्च वर्षां चक्रुः चतुर्दिशम् ॥११॥
उपद्रवं द्विजो वीक्ष्य सीतायै विनिवेदयेत् ।
तव जन्मोत्सवे मातर्यदि प्रस्तरवर्षणम् ॥१२॥

तदा पुष्पवर्षणं हि कस्या जन्मोत्सवे भवेत् ।
तवेच्छया जगत्सर्वं विस्तृतं चेष्टते सदा ॥१३॥
कथं दुष्टान्न शमयसि वीक्ष्य भक्तान् ह्युपद्रुतान् ।
भक्तक्लेश निराकर्तुं सीता साक्षात् कृपामयी ॥१४॥

एकबार श्रीजानकीनवमी की तिथि प्राप्त होने पर सुन्दर बुद्धिवाले श्रीवैष्णव ब्राह्मण ने शास्त्रीय विधि विधान पूर्वक पूर्णः रीति से अनेक प्रकार से श्रीजानकीजी का पूजन प्रारम्भ किया। उस समय पूजा के अवसर पर ही दुर्बुद्धि दुष्टजनों ने ऊपद्रव प्रारम्भ कर दिया। चारों ओर से धूल तथा पत्थर बरसाने लगे, असह्य उपद्रव होते देखकर ब्राह्मण ने श्रीसीता मैया से निवेदन किया कि हे माता ! आपके जन्म महोत्सव पर यदि पत्थर बरसते हैं तो फूलों की वर्षा किसके जन्म उत्सव पर होगी ? यह समस्त जगत् आपही की इच्छानुसार चलता है तब इन दुष्टों का दमन क्यों नहीं करती हैं देखती नहीं हैं आपके भक्तों पर कितने भयङ्कर उत्पात मचाये जा रहे हैं ? इस प्रकार ब्राह्मण की अति दीन पुकार सुनकर साक्षात् कृपामयी श्रीजानकीजी ने भक्त के क्लेश का निराकरण करने को इच्छा की (श्लोक १० से १४)

दुष्टान् सर्वान् गलत्कुष्टान् चकाराशुभ दर्शनान् ।

दुष्टा ऊचुः—

क्व गच्छामः क्व तिष्ठामः कोऽस्मान् रक्षेत् किल्बिषात् ।
हा हाऽस्माभिः कृतं कर्म दुष्टं लोकविगर्हितम् ।
रुरुदुः शुशुचुः सर्वे देहं वीक्ष्य सुनिन्दितम् ॥१६॥

एवं गते सप्तदिने नभोवाणी उवाच तान् ।
रे दुष्टाः शरणं यान्तु ब्राह्मणं वेदवित्तमम् ॥१७॥
नान्य यत्नात् क्लेशशान्तिः द्विज पादोदकं विना ।
इति श्रुत्वा नभोवाणीं गत्वा ब्राह्मण सन्निधिम् ॥१८॥
तस्यपादोदकं पीत्वा क्लेशमुक्ताऽभवंस्तदा ।

सभी दुष्टों के शरीर में गलत्कुष्ठ हो गया, उनका स्वरूप बहुत भयङ्कर हो गया सभी दुष्ट रो-रो कर चिल्लाने लगे, "अब हम कहां जायं, अब हम कहां रहें ? इस महान् पाप से हमारी रक्षा कौन करेगा ? हाय-हाय हमने महान् दुष्ट लोकनिन्दित कार्य किया जिसका फल तुरन्त हाथों हाथ भोगने को मिला है।" ऐसा कह कर सब अपने घृणित शरीर को देख देख कर रोने लगे, पश्चाताप करने लगे, इस प्रकार सात दिन होने पर आकाशवाणी हुई रे दुष्टजनों ! तुम लोग उस वेदवेदान्त का रहस्य जानने वाले ब्राह्मण के शरण जाओ ! जिनका तुमने महान् अपराध किया है उसको कृपा बिना उसके चरण धोकर चरणोदक लिये बिना किसी अन्य उपाय से तुम्हारा यह कष्ट किसी प्रकार शान्त होने वाला नहीं है। ऐसी आकाशवाणी सुनकर सभी दुष्टात्मा उन प्रभु के प्यारे ब्राह्मण की शरण गये तथा उनके चरण धोकर चरणामृत लिया तब सभी क्लेश से मुक्त हो गये। (श्लोक १५ से १८)

श्रीसीतारामयोः मन्त्रं लब्ध्वा तस्माद् द्विजोत्तमात् ॥१९॥
दुष्टास्ते साधवोजाता युग्ममन्त्र परायणाः ।

द्वयोर्जन्मनवम्याश्च उत्साह व्रतकारिणः ॥२०॥
अन्ते सार्द्धं ब्राह्मणेन विमानवरमास्थिताः ।
साकेते प्रययुः सर्वे पुनरावृत्तिवर्जिताः ॥२१॥
सुमङ्गलगणा नाम्ना प्रथिता तत्र संस्थिताः ॥२२॥

इति श्रीभुवनेश्वर संहितायां श्रीजानकीनवमी व्रतकथा माहात्म्य कथनोनाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥१४॥

सभी दुष्ट साधुजन बन गये सभी ने उन्हीं ब्राह्मणदेवता से श्रीसीतारामजी का युगलमन्त्र ग्रहण किया सभी मन्त्रराज के अनुष्ठान में परायण हो गये । श्रीसीता नवमी तथा श्रीरामनवमी दोनों नवमी का व्रत-उत्सव प्रतिवर्ष अतिशय आनन्द उत्साह पूर्वक करने लगे तथा अन्त में अपने गुरुदेव उन्हीं ब्राह्मण के साथ विमान पर बैठकर परमधाम श्रीसाकेत में पहुँच गये । जहाँ से पुनः आवागमन का चक्कर छूट जाता है उस नित्य परमपद के निवासी हो गये वहाँ ये "सुमङ्गलगणों" के नाम से प्रख्यात होकर विराजमान हैं ॥

"यह श्रीभुवनेश्वर संहिता का "श्रीजानकीजन्म व्रतकथा माहात्म्य" कथन नामक चौदहवाँ अध्यायपूर्ण हुआ ।"

महर्षि वाल्मीकि शोध ... 829 अयोध्या श्री ... दास छावनी से

"श्रीरामानन्द-साहित्यमाला" का

❀ अनुपम-उपहार ❀

श्रीसीता-स्तोत्र सुधा-सागर

यह परम दुर्ज्ञेय श्रीसीता रहस्य को प्रकट करने वाला महान् विशाल ग्रन्थ है, परब्रह्म श्रीराम की परात्पराशक्ति श्रीसीताजी की स्तुति प्रार्थना के दिव्य स्तोत्रों का अभूत्र्व संग्रह है। वेद-उपनिषद-आगम तंत्र-रहस्य-रामायण पुराण संहिता-पञ्चरात्रादि प्राचीन ग्रन्थों के स्तोत्रों का संकलन पूर्वार्द्ध में है तथा उत्तरार्द्ध में भगवत्स्वरूप आचार्यों के सन्तों के महापुरुषों के तथा अर्वाचीन विद्वानों के रचे हुये भावपूर्ण रस-मय हृदय को प्रेमरस से परिपूर्ण करने वाले मनोहर स्तोत्रों का सँकलन किया गया है। भगवती आद्याशक्ति श्रीसीता उपा-सना के तत्त्व को जानने के लिये यह एक अद्वितीय ग्रंथ है। आप आज ही अपनी प्रति सुरक्षित करलें क्योंकि महंगी के कारण केवल एक हजार प्रतियां ही छापी गयी है। निछावर पूर्वार्द्ध का १५) तथा उत्तरार्द्ध का २१) मात्र ही है।

प्राप्ति स्थान—

श्रीसीतारामीय सेवा मंदिरम्
नजरबाग अयोध्या
जिला-फैजाबाद (उ० प्र०)

श्रीरामानन्द-आश्रम
जनकपुरधाम (नेपाल)
वाया-जयनगर जिला-मधुवनी विहार

मुद्रकः—श्याम मुद्रणालय, श्यामसदन, कटरा, अयोध्या, (उ. प्र.)